

आरम्भ वर्ष - 2023,  
चातुर्मासिक - Tri-Annual

वर्ष - द्वितीय  
अङ्क - द्वितीय (अप्रैल - 2024)  
ऑनलाइन प्रकाशन

# बुन्देलखण्ड विमर्श BUNDELKHAND VIMARSH

(भारतीय ज्ञान परम्परा की सान्दर्भिक एवं पुनरीक्षित शोधपत्रिका)

(Refereed and Reviewed Research Journal of Indian Knowledge System)

: प्रकाशक :



बरौदी संस्कृति संस्कृत संस्कार शिक्षा समिति

**BARAUDI SANSKRITI SANSKRIT SANSKAR SHIKSHA SAMITI**

ग्राम - बरौदी, पत्रालय - सनौरा, जिला - दतिया (मध्यप्रदेश), भारत, 475686.

Vill.- Barodi, P.O.-Sanora, Distt.-Datia(Madhya Pradesh) Bharat,475686.

Cont.- +91 88277 66640, +91 78799 58816,

Email:- [sanskritsamiti17@gmail.com](mailto:sanskritsamiti17@gmail.com), Website:- [www.sanskritsamiti.org](http://www.sanskritsamiti.org)

## प्रधान सम्पादक

डॉ. उपेन्द्र भार्गव

## सम्पादक

डॉ. आनन्द प्रकाश शुक्ल

## सह सम्पादक

डॉ. कपिल कुमार भार्गव, शिरीन कुरैशी

## सम्पादक मण्डल

प्रो. श्यामदेव मिश्र

प्रो. प्रसाद गोखले

डॉ. अवतारजीत सिंह

डॉ. नितिन जैन

डॉ. अखिलेश कुमार द्विवेदी

डॉ. रामकुमारी

डॉ. रमण मिश्र

डॉ. मोहन बैरागी

डॉ. लवलेश मिश्र

प्रो. नीलाभ तिवारी

प्रो. पराग जोशी

डॉ. कृष्णकान्त तिवारी

डॉ. देशबन्धु

डॉ. दिनेश रसाळ

डॉ. हिमांशु द्विवेदी

डॉ. प्रभाकर पाण्डेय

डॉ. रूपाली सारये

डॉ. रमा आर्या

## प्रबन्धन एवं तकनीकी सम्पादक

विवेक कुमार शर्मा

राज भार्गव

वाई श्री तेजस्वी

## सदस्यता विवरण

वार्षिक सदस्यता	-	1500/- (एक हजार पांच सौ रुपये मात्र)
एक अंक	-	750/- (सात सौ पचास रुपये मात्र)

: प्रकाशक :

बरौदी संस्कृति संस्कृत संस्कार शिक्षा समिति

## सम्पादकीय

“स्वाध्यायप्रवचनाभ्यं न प्रमदितव्यम्” इस उपनिषद वाक्य के ध्येय को जीवन लक्ष्य बनाकर भारतीय ज्ञान परम्परा के सिद्धान्तों द्वारा अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से अनेक शोध अध्येता, अनुसंधाता तथा गवेषकों ने प्राचीन काल से चारों वेद, छह वेदांग, अठारहों पुराण, रामायण, महाभारत, शताधिक उपनिषद, दर्शन और विस्तृत संस्कृत वाङ्मय के अथाह ज्ञानसिन्धु को पार करने का प्रयत्न किया है और वर्तमान में भी यह यात्रा अनवरत रूप से प्रवाहमान है। प्रत्येक शोधार्थी के लिए यह आवश्यक है कि वह निरन्तर स्वाध्याय करे और स्वाध्याय से उपार्जित ज्ञान को अपने आलेख द्वारा अन्य ज्ञान पिपासुओं तक सम्प्रेषित करने का यत्न भी करे तभी अध्ययन एवं अनुसन्धान की सार्थकता सिद्ध होती है। ज्ञानप्रवाह को निष्कल्मष बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि शोध, अनुसन्धान एवं गवेषणा को प्रोत्साहित किया जाए तथा शोधार्थियों को पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराये जाने चाहिए जिससे संचित ज्ञान की अभिरक्षा तथा भविष्य के लिए उसका पोषण सुनिश्चित किया जा सके।

वर्तमान में भारतीय ज्ञान परम्परा के साथ अन्य आधुनिक ज्ञान - विज्ञान के समावेशी एवं अन्तर्विषयी तथा भारतीय भाषाओं में शोध अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करने के लिए जो प्रावधान तथा प्रयत्न वर्तमान ‘राष्ट्रीय शिक्षा नीति’ में किये गए हैं वे निश्चित रूप से शिक्षा में क्रान्ति का सूत्रपात करते हैं। भारतीय ज्ञान मीमांसा में योग, ज्योतिष आयुर्वेद, वेदान्त, राजनीति, धर्म, समाज, अर्थशास्त्र तथा मनोविज्ञान आदि ऐसे अनेक महत्वपूर्ण विषय हैं जिनका अध्ययन अन्य विषयों के परस्पर सामंजस्य से नूतन दृष्टि प्रदान करता है।

अतः प्रस्तुत शोध पत्रिका 'बुन्देलखण्ड विमर्श' भारतीय ज्ञान परम्परा में निहित लोक कल्याण परक विषयों के प्रचार - प्रसार, उन्नयन एवं शोध उद्देश्यों को पूर्ण करने हेतु सुधी पाठकों, विद्वज्जनों, समीक्षकों, आलोचकों के समक्ष प्रस्तुत है। हमारा लक्ष्य है कि पत्रिका में प्रकाशित होने वाले शोधपत्रों के माध्यम से हमारे अध्येता शोधार्थियों के ज्ञान में वृद्धि हो तथा वे सान्दर्भिक शोध की दिशा में प्रवृत्त हो सकें। हमें आशा है कि हमारे प्रिय पाठकों के महत्वपूर्ण सुझाव और मार्गदर्शन हमें निरन्तर प्राप्त होंगे जिनसे हम अपनी गुणवत्ता विकसित कर सकेंगे तथा आपके लिए सुदृढ़ बौद्धिक पाथेय उपलब्ध करा सकेंगे।

आपके स्नेह एवं सहयोग का आकाङ्क्षी

डॉ. आनन्द प्रकाश शुक्ल

चैत्र शुक्ल एकादशी  
१९ अप्रैल २०२४

## विषयानुक्रमिका

1	सन 1857 की क्रांति में झाँसी की वीरांगनाओं का योगदान	डॉ. रमा आर्य	1-8
2	'छँगुरी' : लोक की पीड़ा को वाणी देने वाली	गौरव गौतम	9-14
3	बुंदेली भाषा की राजनीति : एक पड़ताल	किसान गिरजाशंकर कुशवाहा अर्चना मिश्रा	15-23
4	नागार्जुन के उपन्यास 'कुम्भीपाक' में चित्रित स्त्री संघर्ष	अवनीश सिंह नरवरिया डॉ. सोलंकी प्रतिभा	24-31
5	समकालीन ग़ज़लों की भाषाई संरचना	यशवंत काछी डॉ. वंदना चराटे	32-37
6	डॉ. जयप्रकाश कर्दम के उपन्यास 'उत्कोच' के नायक 'मनोहर' के आदर्शवादी व्यक्तित्व का मूल्यांकन	सुमीर ठाकरे डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन	38-41

## सन 1857 की क्रांति में झाँसी की वीरांगनाओं का योगदान

डॉ. रमा आर्य<sup>1</sup>

**शोधसार** - विश्व में बुंदेलखंड की भूमि 'कलम, कला, किसान और कृपाण की धरती' के नाम से पहचानी जाती रही है। जब हमारा भारत देश ईस्ट इंडिया कंपनी और ब्रिटिश सरकार का गुलाम हुआ तब इसी बुंदेलखंड की धरती से अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई ने 'सुराज के लिए लड़िबो चहिए' की देशप्रेम की मानसिकता से राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व किया। सन 1857 की क्रान्ति में झाँसी की वीरांगनाओं में झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई, मोतीबाई, काशीबाई, सुंदर और मुंदर आदि का उल्लेखनीय योगदान रहा है।

**कुंजी शब्द** - सन 1857 की क्रांति, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, झाँसी, झाँसी की वीरांगना, झाँसी की रानी, महारानी लक्ष्मीबाई, बाईसा, नारी सेना, मोतीबाई, काशीबाई, सुंदर, मुंदर।

**प्रस्तावना** - विश्व में बुंदेलखंड की भूमि 'कलम, कला, किसान और कृपाण की धरती' के नाम से पहचानी जाती रही है। भारत और विश्व के आदिग्रंथ वेदों की रचना यहीं कालपी जिला जालौन में महर्षि वेदव्यास ने की और फिर महर्षि वाल्मीकि ने कशीला जिला अशोकनगर में रामायण की रचना की और यहीं वाल्मीकी आश्रम में माँ सीता ने लव-कुश को जन्म दिया। यहीं बीजौर-बाघाट जिला निवाड़ी में गुरु द्रोणाचार्य ने अर्जुन को धनुर्विद्या सिखाई। इसी बुंदेलखंड में महोबा में बुंदेली के आदिकवि जगनिक ने 'आल्हा चरित' रचकर विश्व को आल्हा-ऊदल की शौर्यगाथा का रसपान कराया। और फिर जब हमारा भारत देश ईस्ट इंडिया कंपनी और ब्रिटिश सरकार का गुलाम हुआ तब इसी बुंदेलखंड की धरती से अंग्रेजी हुकूमत के खिलाफ झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई ने 'सुराज के लिए लड़िबो चहिए' की देशप्रेम की मानसिकता से राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व किया। इस स्वतंत्रता संग्राम में बुंदेलखंड की रियासतों समेत दिल्ली, भोपाल, लखनऊ, प्रयागराज के शासकों ने भाग लिया और अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिए। हम लोग मानते हैं कि सन 1857 की क्रांति सत-प्रतिशत भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था। इस स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत 5 जून सन 1857 को झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में झाँसी से हुई थी। झाँसी की रानी को हम

<sup>1</sup> सहायक प्राध्यापक (हिन्दी), श्री पीताम्बरा पीठ संस्कृत महाविद्यालय, दतिया, मध्य प्रदेश

लोग 'बाईसाब' के नाम से पुकारते हैं। आइये जानते हैं सन 1857 की क्रांति में झाँसी की वीरांगनाओं का योगदान के बारे में...।

● सन 1857 की क्रांति में झाँसी की वीरांगनाओं का योगदान -

सन 1857 की क्रान्ति में झाँसी की वीरांगनाओं का योगदान विश्व इतिहास की अमूल्य धरोहर है। झाँसी की रानी के किले के पास बने महारानी लक्ष्मीबाई पार्क, झाँसी में स्थापित झाँसी की रानी की प्रतिमा के शिलालेख में लिखा है - "प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की दीपशिखा महारानी लक्ष्मीबाई, जिनके आत्मोसर्ग ने भारतीय महिलाओं का मस्तक गौरवान्वित किया।"<sup>1</sup> झाँसी की रानी के संदर्भ में लिखे इस कथन से सिद्ध होता है कि सन 1857 की क्रांति यानी प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत झाँसी की रानी के द्वारा झाँसी से हुई थी। मेरठ से मंगल पांडेय द्वारा नहीं। मंगल पांडेय जैसे सैनिकों द्वारा चर्बी लगे कारतूस के विरोध की घटना सिर्फ सिपाही विद्रोह थी, क्रांति बिल्कुल भी नहीं। सन 1857 की क्रान्ति में झाँसी की वीरांगनाओं में झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई, मोतीबाई, काशीबाई, सुंदर और मुंदर आदि का उल्लेखनीय योगदान रहा है। इनके योगदान को हम इस प्रकार जान सकते हैं। सबसे पहले हम विश्व में नारी सशक्तिकरण की अनोखी मिशाल, महान वीरांगना झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के योगदान के बारे में जानते हैं। झाँसी की रानी की वीरता के किस्से आज भी विश्व के हर गाँव और शहर में सुने जाते हैं। उनकी शौर्यगाथा को इतिहासकारों, सरकारों, साहित्यकारों और आम जनता ने सहेजकर रखा है।

कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान की विश्वप्रसिद्ध कविता 'झाँसी की रानी' की ये पंक्तियाँ रानी लक्ष्मीबाई की वीरता की कहानी सबको सुनाती है -

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,  
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नई जवानी थी,  
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,  
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,  
चमक उठी सन् सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी।  
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी।  
खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी ॥<sup>2</sup>

सन 1857 की क्रान्ति में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के विरुद्ध ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना की अगुआई करने वाले जनरल ह्यूरोज ने अपनी आत्मकथा में रानी लक्ष्मीबाई की वीरता को नमन करते हुए लिखा है - "झाँसी की रानी विद्रोहियों में मर्द थीं। रानी मर्दों की तरह कपड़े पहनती थीं और अपने सिर पर पगड़ी भी और साथ ही मर्दों की ही तरह घुड़सावरी भी करना जानती थीं।"<sup>3</sup>

ऐसी थीं झाँसी की रानी, महान वीरांगना लक्ष्मीबाई जिनकी वीरता की प्रशंसा उनके दुश्मन अंग्रेज सैन्य अफसर जनरल ह्यूरोज ने भी की है। झाँसी की रानी ने "भाग-भाग फिरंगी भाग... झाँसी की रानी आयी", "मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी" और "सुराज के लिए लड़िबो चाहिए" जैसे नारे बुलन्द कर एक ओर अंग्रेजी हुकूमत की जड़ें हिला दीं तो दूसरी तरफ "हर हर महादेव" का नारा बुलन्द कर भारतीय संस्कृति की रक्षा की मिशाल कायम की।

झाँसी के इतिहासकार जानकी शरण वर्मा '1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी' में झाँसी की रानी के योगदान के बारे में लिखते हैं - "1857 की जनक्रान्ति की अग्रणी सेनानायक, 'सुराज के लिए लड़िबो चाहिए' की प्रेरणादायिनी, समरांगण में अपनी तलवार से अंग्रेजों में दहशत पैदाकर, भीरुओं में शक्ति पैदाकर, स्त्री समाज का भाल ऊँचा करने वाली, काशीबाई, सुन्दर और मुन्दर की प्राणप्रिय सहेली, देश की स्वतंत्रता की रक्षा करने वाली, आन-बान और शान की न मिटने वाली ज्योति की चमक थीं - झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई।<sup>4</sup>

झाँसी के राजा और पति गंगाधर राव के निधन के बाद रानी लक्ष्मीबाई ने झाँसी राज्य के शासन की बागडोर अपने हाथों में संभाल ली थी। इस संदर्भ में उपन्यासकार डॉ० वृन्दावनलाल वर्मा ने 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई' में लिखा है - "लक्ष्मणराव प्रधानमंत्री, तोपें ढालने वाला भाऊ, प्रधान सेनापति जवाहर सिंह, पैदल सेना के लिए कर्नल - एक दीवान रघुनाथ सिंह, दूसरा मुहम्मद जमा खाँ, तीसरा खुदाबख्श, घुड़सवारों की प्रधान स्वयं रानी, कर्नल - सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई, तोपखाने का प्रधान गुलाम गौस खाँ, नायब दीवान दूल्हाजू, न्यायाधीश नाना भोपटकर, मोरोपन्त कमठाने के प्रधान, जासूसी विभाग मोतीबाई के हाथ में और नायब-जूही।"<sup>5</sup>

अपने दत्तक पुत्र दामोदर राव को उत्तराधिकारी का दर्जा हेतु रानी लक्ष्मीबाई ने कई प्रयास किए, लेकिन फिरंगियों की कुटिल नीति के कारण पुत्र को उत्तराधिकार का दर्जा दिखाने में नाकामयाब रहीं। इस संदर्भ में इतिहासकार जानकी शरण वर्मा लिखते हैं - "बाईसाहिबा राजा के निधन के बाद से ही अंग्रेज सरकार को अपने पुत्र को उत्तराधिकारी बनाने के लिए अनेक पूर्व सन्धि-पत्रों का हवाला देते हुए प्रार्थना पत्र प्रस्तुत कर चुकी थीं, किन्तु वह रानी को अंग्रेजी शासन का हितैषी नहीं मानते थे। इसलिए अंग्रेजी शासन ने पूर्व में की गई सन्धियों की उपेक्षा कर 27 फरवरी, 1854 को झाँसी को अंग्रेजी राज्य में मिलाने की घोषणा कर बुन्देलखण्ड के राजनीतिक अभिकर्ता मालकम को सूचना भेज दी। विलय की सूचना मिलते ही उसने यह सूचना झाँसी के राजनीतिक अभिकर्ता एलिस को भेज दी, जिसने 7 मार्च, 1854 को घोषणा कर दी कि 'झाँसी राज्य की प्रजा ध्यान दे कि भविष्य में वह अंग्रेजी राज्य के अधीन रहेगी और अपने सभी कर आदि सरकार के प्रतिनिधि मेजर एलिस को देगी।' एलिस द्वारा झाँसी विलय की घोषणा होते ही रानी ने क्रोधित हो कहा - 'मैं झाँसी नहीं दूँगी'। और अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध की तैयारी में जुट गई।

सदाशिवराव उन दिनों झाँसी में ही निवास करता था। 31 मई को कुछ होने वाला है, इसकी खबर उसे लग गई तो उथल-पुथल की परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए उसने परेला से तीन हजार सैनिक लेकर झाँसी के अधीन करैरा दुर्ग पर अपना आधिपत्य जमा लिया। करैरा में थानेदार और तहसीलदार नियुक्त थे। उनको सदाशिवराव ने मार भगाया और आस-पास के जागीरदारों से रुपया वसूल कर महाराजा की पदवी ग्रहण कर ली। जिन जागीरदारों ने उसे महाराजा स्वीकार नहीं किया, सैनिक बल के आधार पर उसने उनकी जागीरदारी समाप्त कर दी। सदाशिवराव के करैरा दुर्ग पर अधिकार किए जाने की सूचना जासूसी विभाग की प्रमुख मोतीबाई ने 13 जून की रात को रानी को जैसे ही दी, रानी तुरन्त घुड़सवार सैनिकों को लेकर करैरा पहुँच गई। उन्होंने करैरा किले को चारों तरफ से घेर लिया। रानी के बहादुर सैनिकों से किले को घिरा देख सदाशिवराव बिना युद्ध किए हुए नरवर भाग गया, परन्तु रानी ने नरवर दुर्ग को घेर कर सदाशिवराव को पकड़ लिया और उसे झाँसी दुर्ग में कैदी के रूप में बन्द कर दिया।"<sup>6</sup>

रानी लक्ष्मीबाई के स्वतंत्रता संघर्ष के बारे में इतिहासकार जानकी शरण वर्मा लिखते हैं - "कालपी पर अंग्रेजों का आधिपत्य हो जाने पर लक्ष्मीबाई, राव साहब किसी प्रकार ग्वालियर से 75 किलोमीटर दूर गोपालपुरा गाँव पहुँच गए। समाचार मिलते ही तात्या और बाँदा के नवाब भी गोपालपुरा पहुँच गए। अंग्रेजों से बचने का केवल एक ही रास्ता था कि पुनः उनसे युद्ध किया जाए। इस विषय पर विचार कर युद्ध की रणनीति तैयार की गई। रानी का सुझाव था कि अंग्रेजों से सफलतापूर्वक युद्ध के लिए ग्वालियर दुर्ग पर आधिपत्य जमाया जाए। उस समय ग्वालियर जयाजी राव के अधीन था जो स्वातंत्र्य सैनिकों को दबाने के लिए हर प्रकार से धन और सैनिकों से अंग्रेजों की सहायता किया करता था। उसे किस प्रकार अंग्रेजों के विरुद्ध किया जाए, इस पर गहन चिन्तन कर रणनीति निर्धारित की गई। यद्यपि दिल्ली में 1857 में अंग्रेजों के खिलाफ युद्ध छिड़ जाने से उसकी लपटों ने ग्वालियर के सैनिकों को भी अंग्रेजों के विरुद्ध स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए उत्प्रेरित कर दिया था। परिणामतः 14 जून, 1857 को ग्वालियर की कान्टीजेंट सेना ने छावनी में विद्रोह कर आग लगा दी, जिसमें बहुत से सैनिक और अधिकारियों को प्राण देने पड़े, परन्तु किसी प्रकार जयाजी राव और उसके चतुर मंत्री सलाहकार दिनकर राव के समझाने पर भड़की हुई सेना शान्त सी हो गई, परन्तु उनके मन में स्वतंत्रता की आग अन्दर ही अन्दर सुलगती रही जो समय पाकर प्रज्वलित हो गई। 3 जून को फूलबाग में दरबार हुआ, जिसमें सभी सेनाओं के अधिकारी व दरबारी सम्मिलित हुए। पेशवा का राज्याभिषेक किया गया और उपहार भेंट किए गए। तात्या टोपे को सेनापति घोषित किया गया। सिंहासन पर आरूढ़ होते ही राव साहब मौज-मस्ती में दिन गुजारने लगे। रानी चाहती थीं कि पेशवा जीत को स्थायी करने के लिए सेना को सुसज्जित करें और अनुशासन की ओर ध्यान दें, परन्तु वे दायित्व और कर्तव्य से च्युत होकर रंगरेलियाँ मनाने में ही मग्न

रहे। पन्द्रह दिन पश्चात् अंग्रेजों ने विशाल फौज के साथ ग्वालियर पर हमला किया। उसका सामना करने के लिए रानी फिर से डट गई। पूर्व दिशा के द्वार की रक्षा का भार उन्हें सौंपा गया था। अंग्रेजों की ओर से इस मोर्चे का दायित्व जनरल स्मिथ पर था। रानी और उनकी सैनिक सहेलियाँ काशी और मुन्दर घोड़े पर सवार हुईं। स्मिथ ने रानी के मोर्चे पर अनेक बार हमले किए, परन्तु उसकी दाल नहीं गली तो उसने अपना मोर्चा दूसरी ओर मोड़ा। मुन्दर घोड़े पर सवार होकर एक टीले पर स्मिथ की सेना की निगरानी कर रही थी। मेक्सफर्सन के अनुसार, अचानक उस पर तलवार का वार हुआ तो 'बाई साहिबा मरी' यह उसके मुख से निकला। उसकी करुण पुकार से रानी का हृदय विदीर्ण हो गया। अपने प्राणों की परवाह न कर रानी ने मुन्दर के हत्यारे पर वार कर उसे मौत के घाट उतार दिया। फिर वे तेजी से आगे बढ़ीं। रानी का घोड़ा मुरार ग्वालियर मार्ग के मोड़ पर नाला आ जाने से रुक गया। इतने में ही अंग्रेज सिपाहियों की ओर से गोलियाँ दागी गईं। एक गोली रानी की बगल में लगी। रानी घायल शेरनी की भाँति ऐसे युद्ध करती रहीं कि उनकी एक आँख भी जाती रही। गुल मुहम्मद, रघुनाथ सिंह और देशमुख रानी को पास ही में स्थित बाबा गंगादास की फुटी में ले गए। वहाँ चिता बनाई गई। रानी ने उस पर बैठकर स्वयं अग्नि प्रज्वलित की। इस प्रकार क्रान्ति की अधिष्ठात्री रानी लक्ष्मीबाई ने 18 जून, 1858 को अपना बलिदान कर दिया।<sup>7</sup>

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के स्वतंत्रता संग्राम में योगदान को वीर सावरकर इस प्रकार रेखांकित करते हैं - "रानी लक्ष्मीबाई अपना लक्ष्य पूरा कर गईं। ऐसा एक जीवन सम्पूर्ण राष्ट्र का मुख उज्वल करता है। वह सब गुणों की निचोड़ थीं। एक महिला, जिसने जीवन के 23 बसन्त ही देखे थे, कोमलांगी, मधुर, विशुद्ध, उसके हृदय में देशभक्ति रत्नदीप की तरह प्रकाशवान थी। अपने देश भारत पर उसे गर्व था। युद्ध कौशल में वह अद्वितीय थी। विश्व में शायद ही कोई ऐसा देश होगा, जो ऐसी देवी को अपनी कन्या और रानी कहने का अधिकारी होगा। इंग्लैंड के भाग्य में यह सम्मान अब तक नहीं बढ़ा है। 1857 के स्वातंत्र्य समर पर ज्वालामुखी की यह अन्तिम ज्वाला है।"<sup>8</sup>

सन 1857 की क्रान्ति में झाँसी की वीरांगनाओं में रानी लक्ष्मीबाई के अलावा मोतीबाई, काशीबाई, सुंदर और मुंदर का नाम मुख्य रूप से लिया जाता है। मोतीबाई राजा गंगाधरराव की दरबारी नर्तकी और तोपची थी। जबकि काशीबाई, सुंदर और मुंदर तीनों रानी लक्ष्मीबाई की वीर सहेलियाँ थीं। इन चारों ने रानी लक्ष्मीबाई की सेना में रहकर अदम्य साहस का परिचय दिया।

मोतीबाई के बारे में भारत सरकार द्वारा संचालित एवं प्रकाशित 'आजादी का अमृत महोत्सव' नामक पोर्टल पर लिखा गया है - "एक साधारण नर्तकी से नारी शक्ति बनकर रानी की नारी सेना में सामिल हुई थी। घुड़सवारी, तलवार कला और तोप चलाने में उसे महारथ हासिल थी। जिसका सफल प्रदर्शन उसने झाँसी पर ओरछा सेना का प्रथम आक्रमण में और ह्यूरोज की अंग्रेजी सेना के विरुद्ध अंतिम साँस तक लड़ते हुए किया था। 21 मार्च 1858 ई0 के युद्ध में मोतीबाई,

लक्ष्मीबाई की संरक्षा में उनके साथ रहीं। कम्पनी सेना के जबरदस्त हमले को देखकर रानी ने मोतीबाई को गुलाम गौस के साथ तोप संचालन पर लगा दिया। वीरांगना मोतीबाई ने पूरी दक्षता के साथ इस कार्य को निभाया, जिससे अंग्रेज सेना तोप के गोलों की मार से किले के निकट नहीं आ पा रही थी। कड़क बिजली से निकले गोले गोरों के काल बनकर उन पर गिर रहे थे। काफी संघर्ष के बाद एक गोला मोतीबाई को लगा और वह शहीद हो गयी। रानी लक्ष्मीबाई ने आदर के साथ उनको खुदाबक्स की समाधि के पास किले में दफन कर उसे सलाम किया। मोतीबाई की मजार पर आज हजारों लोग श्रद्धा के साथ नमन कर उसके राष्ट्रधर्म से प्रेरणा लेते हैं।<sup>9</sup>

भारत सरकार द्वारा संचालित एवं प्रकाशित 'आजादी का अमृत महोत्सव' नामक पोर्टल पर इतिहासकार गिरजाशंकर कुशवाहा ने भी वीरांगना मोतीबाई की जीवनी में लिखा गया है - "वीरांगना मोतीबाई ने 1857 की क्रांति में एक प्रमुख हस्ती, झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई की कट्टर सहयोगी के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मोतीबाई, जो मूल रूप से झाँसी के राजा श्रीमंत गंगाधर राव के रंगमंच की नर्तकी और अभिनेत्री थीं, रानी की रणनीति में एक प्रमुख व्यक्ति बन गईं। अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में जानने पर, रानी लक्ष्मीबाई ने भावनात्मक रूप से मोतीबाई से कहा कि उन्हें झाँसी के हित में दुश्मन के बारे में विशेष जानकारी इकट्ठा करने के लिए ब्रिटिश अधिकारियों से संपर्क स्थापित करना होगा। उन्होंने मोतीबाई से नवाब अली बहादुर के पास जाने और उन्हें प्रभावित करने का प्रयास करने का आग्रह किया। अंग्रेजों के मित्र होने के नाते नवाब साहब उनके साथ संवाद स्थापित करने के लिए एक पुल का काम कर सकते थे। नवाब साहब द्वारा आयोजित बैठकों के माध्यम से, उनका उद्देश्य सैन्य गतिविधियों और अन्य महत्वपूर्ण योजनाओं पर खुफिया जानकारी प्राप्त करना था। नवाब साहब ने झाँसी के मजिस्ट्रेट गॉर्डन से मोतीबाई की बहुत प्रशंसा की, जिससे उनका विश्वास हासिल हो गया। मोतीबाई ने बाद में रानी लक्ष्मीबाई के साथ नवाब साहब की गतिविधियों के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी साझा की, जिससे उनकी रानी के लिए एक जासूस के रूप में उनके साहस और समर्पण का प्रदर्शन हुआ।

मोतीबाई भी सेना में सैनिक पद पर थीं। उन्होंने भवानी शंकर तोप को कुशलतापूर्वक चलाया। 20 मार्च 1858 को जनरल ह्यूरोज ने झाँसी के पास कैमासिन देवी के मंदिर के पास एक शिविर स्थापित किया। रानी लक्ष्मीबाई ने दूरबीन से देखते हुए आसन्न आक्रमण का विचार किया। मोतीबाई ने घुड़सवार हमले का प्रस्ताव रखा। लड़ाई 23 मार्च 1858 को शुरू हुई, जिसमें गोलियाँ दीवारों में घुस गईं। दुर्भाग्य से, मोतीबाई को कंधे में गंभीर चोट लगी, जिससे वह गिर पड़ीं। एक साथी सिपाही ने उसे बचाया और घर के अंदर ले आया। शाश्वत विश्राम से पहले उसने रानी की एक झलक देखी। दुखद बात यह है कि 3 अप्रैल 1858 को वीरांगना मोतीबाई का वीरतापूर्ण अंत हुआ।

उनकी समाधि झाँसी किले की सीमा के भीतर बनाई गई थी, जहाँ वह चिर निद्रा में विश्राम करती हैं, जो उनकी अटूट भक्ति और बलिदान का प्रतीक है।<sup>10</sup>

रानी लक्ष्मीबाई की वीर सहेलियों काशीबाई, सुन्दर और मुन्दर के बारे में इतिहासकार जानकी शरण वर्मा लिखते हैं - "1857 की जंगे आजादी में वीरांगना लक्ष्मीबाई के कुशल सैन्य संचालन में सभी जातियों और वर्ग के पुरुषों व स्त्रियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध लोहा लिया। इस महासमर में पिछड़े लोगों व दलित वर्ग की महिलाओं की समान भागीदारी रही। उनका पराक्रमी, तेजस्वी और निर्मल चरित्र कालचक्र के कारण दब गया है, जिसे उजागर करने की अति आवश्यकता है। प्रस्तुत है ऐसी ही वीर महिला सैनिकों - काशीबाई, सुन्दर और मुन्दर की शौर्यगाथा, जिन्होंने बलशाली अंग्रेजी फौज को मजा चखा दिया था। कृष्णराव की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र रामचन्द्र राव झाँसी के हकदार हुए, लेकिन नाबालिग होने के कारण शासन-सूत्र उनकी माँ सखूबाई के हाथ में रहा। बालिग होने पर रामचन्द्र राव ने राजा की स्थायी उपाधि पाते ही शासन सूत्र पूरे तौर पर अपने हाथ में ले लिया। सखूबाई को अपने हाथ से शासन-सूत्र निकल जाना बहुत अखरा। शासन-सूत्र को अपने हाथ में बनाए रखने के लिए उसने पुत्र रामचन्द्र राव को मार डालने के लिए षड्यंत्र रचा, परन्तु उसके षड्यंत्र का पता चलने पर एक मराठा युवक लालू कोदोलकर और मऊ के आनन्दराव ने उसे बचा लिया और वे झाँसी छोड़कर चले गए। कुछ दिनों बाद इन तीनों के एक-एक लड़की पैदा हुई, जिनके नाम काशीबाई, मुन्दर और सुन्दर था। इनका पालन-पोषण बड़ी दरिद्रता में हुआ। लालू कोदोलकर के रिश्तेदारों को पुनः झाँसी बुला लिया गया। गंगाधरराव का विवाह मनु के साथ झाँसी में सम्पन्न हुआ। नगर वाले गणेश मन्दिर में सामन्ती वर पूजा आदि रीतियाँ पूरी की गईं। विवाह की रस्म के बाद अपरिचित तीनों बालिकाएँ जिनका नाम सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई थे, उपस्थित हुईं। लक्ष्मीबाई ने उनसे पूछा, 'तुम कौन हो?' उन्होंने उत्तर दिया, 'हम आपकी दासियाँ हैं, जो सदैव आपके पास रहा करेंगी।' रानी ने उन्हें अपनी सहेलियाँ बना लिया और वे प्रतिदिन अपनी विश्वासपात्र सहेलियों - सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई से रात्रि 10 बजे भेंट कर हाल-चाल मालूम किया करती थीं। ये तीनों किले के महल में रानी के साथ रहा करती थीं और रानी के प्रति समर्पित थीं और रानी की आज्ञा का पालन करती हुई मरने के लिए आगे-पीछे नहीं सोचती थीं। रानी की दासी होने के लिए लड़कियाँ अन्ब्राह्मण जातियों से रंग-रूप के आधार पर चुनी जाती थीं और उनको आजीवन रानी के साथ कुमारी रहना पड़ता था। यदि उनमें से कोई विवाह कर लेतीं तो उसे महल की नौकरी छोड़ना पड़ती थी। लेकिन रानी ने कभी भी उन्हें दासी नहीं माना। उनके साथ सदैव सहेलियों जैसा प्रेमपूर्ण व्यवहार किया। रानी ने तीनों को घुड़सवारी व शस्त्र चलाने में निपुण बना दिया था। सुन्दर घोड़े पर चढ़ना जानती थी, मुन्दर ने तलवार चलाना सीखा था और काशीबाई ने बन्दूक चलाना। इनका साहस और निर्भीकता को देख रानी लक्ष्मीबाई डाकू सागर सिंह को पकड़ने

के लिए इन्हें बरुआसागर ले गई थीं। उसे घेरकर कैदी के रूप में झाँसी लाई थीं। राजा गंगाधर राव की मृत्यु के पश्चात अंग्रेजी हुकूमत ने झाँसी राज्य का विलय अपने शासन में कर लिया। जब यह समाचार सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई ने सुना तो वे तीनों अत्यधिक दुखी हुईं और जब वे विश्राम के वक्त रानी लक्ष्मीबाई भेंट करने गईं तो दुःख के कारण तीनों ने अपने आभूषण उतार दिए। रानी की ये तीनों सहेलियाँ जहाँ रानी के लिए समर्पित थीं, वहीं वे देशभक्ति और स्वातंत्र्य भावना से भी परिपूर्ण थीं। जब रानी ने उन्हें धैर्य बँधाया कि हमें अपना साहस और धैर्य रखकर अंग्रेजों से अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए पूरी तरह तैयार होकर उन्हें मजा चखाना चाहिए तो वे तीनों उत्साह और जोश से भर उठीं और युद्ध के लिए रानी के आदेश की प्रतीक्षा करने लगीं। अब क्या था, रानी के सैन्य संचालन में रणभेरी बज चुकी थी। खबर पाते ही तात्या भी रानी की मदद के लिए आ पहुँचा। जैसे ही तात्या टोपे रानी की सहायता के लिए आगे बढ़ा कि टोरियों के बीच आते ही तात्या के दस्तों पर अंग्रेजी तोपखाने ने गोले बरसाए। गोले फूटकर तात्या के घुड़सवारों का सत्यानाश कर रहे थे। दस्तों के तितर-बितर होने पर एक ओर काशीबाई और एक ओर जूही हो गई। काशीबाई वाला दस्ता अंग्रेज घुड़सवारों के बीच फँस गया। पहले पिस्तौलें चलीं फिर तलवारें खींचीं। काशीबाई हर-हर महादेव कहकर शत्रुओं पर पिल पड़ी। अंग्रेज समझे कि झाँसी की रानी है, इसको जिन्दा पकड़ना चाहिए, परन्तु काशीबाई इतनी तेजी से युद्ध कर रही थी कि दो अंग्रेज सवार तो कट गए, परन्तु एक अंग्रेज सवार की तलवार से उसका कट गया। इस पर वह पैदल ही लड़ने लगी और उस बहादुर ने उस अवस्था में ही कई शत्रुओं को घायल कर दिया। इसी बीच काशीबाई के सिर पर तलवार पड़ी, लोहे की टोपी के कारण सिर बच गया और कन्धा कट गया, तब भी काशीबाई शिथिल नहीं हुई। फिर उस पर दूसरी तलवार पड़ी जिससे उनका अन्त हो गया। उस समय फिर उसके मुँह से निकला हर-हर महादेव। इस प्रकार काशीबाई झाँसी के संग्राम में मारी गईं। तात्या टोपे पराजित होकर लौट गया। रानी ने युद्ध के लिए पूरी तैयारी कर रखी थी और ओरछा गेट की रक्षा के लिए दुल्हाजू को तैनात कर रखा था। सुन्दर उसके साथ थी, लेकिन दुल्हाजू और पीरअली राज्य में बड़ी जायदाद पाने की लालच में अंग्रेजों से मिल चुके थे। गोरी पल्टनें टिड्डी दल की तरह ओरछा फाटक पहुँचने के लिए दौड़ीं। दुल्हाजू ने फाटक पर लगे सारे ताले और सांकलें तोड़ डालीं। यह देख नंगी तलवारें लिए सुन्दर आ पहुँची। उसने दुल्हाजू से कड़ककर कहा, 'देशद्रोही, नरक के कीड़े तू अंग्रेजों से कुछ नहीं पाएगा।' सुन्दर दुल्हाजू पर पिल पड़ी। दुल्हाजू ने सुन्दर के पेट में छड़ अड़ा दी। सुन्दर के मुँह से हर-हर महादेव निकला था कि एक गोरे की गोली ने सौन्दर्यमयी सुन्दर को अमर बना दिया। जब रानी ने देखा कि अंग्रेज दुल्हाजू के विश्वासघात के कारण ओरछा गेट से शहर में प्रवेश कर रहे हैं, चारों तरफ नागरिकों को मौत के घाट उतारा जा रहा है तो वे अपने विशिष्ट सलाहकारों के परामर्श से 4 अप्रैल, 1858 की मध्यरात्रि को भाण्डेर होती हुई कोंच, कालपी पहुँचीं।

घोर संघर्ष के बाद उन्होंने ग्वालियर किले में अपना आधिपत्य जमा लिया। परन्तु ह्यूरोज उनका पीछा करता हुआ ग्वालियर जा पहुँचा। रानी ने किले से बाहर निकलकर घोर युद्ध किया। इस युद्ध में रानी की विश्वासपात्र मुन्दर भी साथ थीं। जब रानी युद्ध करते हुए आगे जा रही थीं तभी मुन्दर पर एक अंग्रेज सवार ने पिस्तौल दागी। उसके मुँह से केवल यह शब्द निकले 'बाई साहिबा मैं मरी।' यह देख बलवान रघुनाथ सिंह फुर्ती के साथ घोड़े से उतरा, अपना साफा फाड़ा मुन्दर के शव को पीठ पर कसा और घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ा। चिता चुनने के बाद लक्ष्मीबाई और मुन्दर के शवों को चिता पर देशमुख ने रख दिया। इस प्रकार रानी की विश्वासपात्र सहेलियाँ सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई वीरांगना लक्ष्मीबाई के सैन्य संचालन में अंग्रेजों से युद्ध करते हुए मुल्क की आजादी के लिये कुर्बान हो गईं। यह अमर बलिदान देशवासियों को संबल प्रदान करता रहेगा।<sup>11</sup>

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में हुई सन 1857 की क्रांति में बारे में इतिहासकारों के मतों को जानना भी जरूरी है। आइये देखते हैं इतिहासकारों की दृष्टि में सन 1857 की क्रांति - द रिवोल्ट ऑफ हिन्दुस्तान, ईस्ट इंडिया कम्पनी, कोलकाता ने पृष्ठ 51 पर लिखा - "हिन्दुस्तान के विद्रोह के सम्बन्ध में समस्त यूरोप में केवल एक ही राय होनी चाहिए। विश्व के इतिहास में जितने भी विद्रोहों की चेष्टा की गई है, उनमें यह एक सबसे ज्यादा न्यायपूर्ण, भद्र और आवश्यक विद्रोह है।<sup>12</sup>

द फर्स्ट इंडियन वार ऑफ इंडिपेंडेंस के पृष्ठ 57-59 में लिखा गया - "भारतीयों का विद्रोह अंग्रेजों द्वारा गरीब किसानों पर ढाए गए जुल्मों तथा सामान्य जनता पर लगाए जा रहे भारी करों के कारण हुआ। कलेक्टरों द्वारा क्रूरतम वसूली भी जन-विद्रोह का प्रमुख कारण रही।"<sup>13</sup>

डॉ० रामविलास शर्मा 'राज्य क्रान्ति' के पृष्ठ 531 में लिखते हैं - "'57 की क्रान्ति संसार की पहली साम्राज्य विरोधी, सामन्त विरोधी तथा 20वीं सदी की जनवादी क्रान्तियों की लम्बी और अपूर्ण श्रृंखला की पहली महत्त्वपूर्ण कड़ी भी है।"<sup>14</sup>

इतिहासकार आर० सी० मजूमदार कहते हैं - "1857 के विद्रोह को भारतीय इतिहास में ब्रिटिश शासन के लिए एक बड़ी सीधी तथा व्यापक चुनौती के रूप में देखा जाएगा। इसी कारण यह अर्द्धशताब्दी के बाद आरम्भ होने वाले सच्चे राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रेरक बना। ब्रिटिश शासन के हितों को 1857 की स्मृति ने ज्यादा हानि पहुँचाई।"<sup>15</sup>

राष्ट्रवादी इतिहासकार वीर सावरकर 'स्वतंत्रता संग्राम' में लिखते हैं - 'जब कभी देशी रियासतों के प्रमुख सामन्तों ने क्रान्ति 1857 में शामिल होने से इनकार किया तो उन्हीं रियासतों की जनता अनियंत्रित हो गई तथा शामिल न होने पर उसने सम्बन्धित प्रमुख सामन्तों की सत्ता को उखाड़ फेंकने की कोशिश की ताकि वे राष्ट्रीय संग्राम में सम्मिलित हो सकें।'<sup>16</sup>

**निष्कर्ष** - उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सन 1857 की क्रांति सत-प्रतिशत भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था। इस स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत 5 जून सन 1857 को झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई के नेतृत्व में झाँसी से हुई थी। इस क्रांति में झाँसी की वीरांगनाओं में झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई, मोतीबाई, काशीबाई, सुंदर और मुंदर आदि का उल्लेखनीय योगदान रहा है।

### संदर्भ -

- 1 नगर निगम झाँसी, महारानी लक्ष्मीबाई पार्क में स्थापित झाँसी की रानी की मूर्ति पर उत्कीर्ण शिलालेख, झाँसी, अखंड बुंदेलखंड, भारत
- 2 नंदकिशोर नवल (संपादक), स्वतंत्रता पुकारती, झाँसी की रानी (सुभद्रा कुमारी चौहान), साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृष्ठ 198
- 3 न्यूज 18 हिन्दी, झाँसी की रानी के बारे में क्या सोचते थे अंग्रेज, 18 जून 2022
- 4 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 19
- 5 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 26
- 6 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 27
- 7 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 27-29
- 8 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 29
- 9 संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार, अनसंग हीरोज डिटैल, आजादी का अमृत महोत्सव पोर्टल, वीरांगना मोतीबाई, भारत सरकार  
<https://amritmahotsav.nic.in/unsung-heroes-detail.htm?5918>
- 10 गिरजाशंकर कुशवाहा, डिजिटल डिस्ट्रिक्ट रिपोजिटरी झाँसी, आजादी का अमृत महोत्सव पोर्टल, वीरांगना मोतीबाई, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 28 अगस्त 2023  
<https://amritmahotsav.nic.in/district-repository-detail.htm?24114>
- 11 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 29-32

- 12 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 33
- 13 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 33
- 14 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 33
- 15 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 33
- 16 सुरेंद्र दुबे (संपादक), मेरी झाँसी, 1857 की अमर ज्योति वीरोत्तमा रानी लक्ष्मीबाई और उनकी झाँसी (जानकी शरण वर्मा), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2018, पृष्ठ 33।

## 'छँगुरी' : लोक की पीड़ा को वाणी देने वाली

गौरव गौतम<sup>1</sup>

**शोधसार** - 'छँगुरी' सुमन सिंह का कहानी संग्रह है जिसमें 11 कहानियाँ हैं। सबसे पहले कहानियों के शीर्षक- 'अतीत', 'मोल', 'मिलन' आदि पढ़ के 'अज्ञेय' की डायरियों के शीर्षक - 'भवन्ती', 'अंतरा', 'शाश्वती' आदि याद आता है। हालांकि दोनों अलग-अलग विधाओं के शीर्षक हैं लेकिन मनमोहक हैं। प्रतीत होता है कि यह शीर्षक बहुत सोच-विचार के रखे गये हैं और यदि यह अनायास ही रखे गए हैं फिर भी सुंदर बन पड़े हैं। सुमन जी ने कहानियों को 'लोक' से विमर्श व विचारधारा के लेंस चढ़ाये बगैर उठाया है। ऐसे ही कुछ कथा साहित्य का लोकजीवन परक विश्लेषण प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है।

**कुंजी शब्द** - छँगुरी, सुमन सिंह, कहानी संग्रह, कहानियाँ, अज्ञेय, सामाजीकरण, विचारधारा, मनोविश्लेषण, लेखक, कथा साहित्य, आचार्य शुक्ल।

'छँगुरी' सुमन सिंह का कहानी संग्रह है जिसमें 11 कहानियाँ हैं। सबसे पहले कहानियों के शीर्षक- 'अतीत', 'मोल', 'मिलन' आदि पढ़ के 'अज्ञेय' की डायरियों के शीर्षक - 'भवन्ती', 'अंतरा', 'शाश्वती' आदि याद आता है। हालांकि दोनों अलग-अलग विधाओं के शीर्षक हैं लेकिन मनमोहक हैं। प्रतीत होता है कि यह शीर्षक बहुत सोच-विचार के रखे गये हैं और यदि यह अनायास ही रखे गए हैं फिर भी सुंदर बन पड़े हैं। सुमन जी ने कहानियों को 'लोक' से विमर्श व विचारधारा के लेंस चढ़ाये बगैर उठाया है। सामाजीकरण व अध्ययन के दौरान अमूमन यह होता ही है कि हमारा चिंतन किसी न किसी विचारधारा या विमर्श के दायरे में ही होता है हम उससे अवगत हो या न हो। किंतु यदि विचारधारा को केंद्र में रखकर कहानी या किसी भी विधा में लिखा जाता है तो उससे ज्यादातर विचारधारा केंद्र में और कथ्य हाशिए में चला जाता है जिसे मनोविश्लेषण से प्रभावित लेखक 'इलाचन्द्र जोशी' के कथा साहित्य में देखा जा सकता है। सुमन सिंह की कहानियों में 'उर्मिला शिरीष' ने जिस 'कहानीपन' की बात की है<sup>(1)</sup> वह इसी वजह से है कि इन 11 कहानियों में भले कोई विचारसरणि मिल जाए लेकिन वह कहानी में सायास लायी हुई प्रतीत नहीं होती है।

<sup>1</sup> शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

आचार्य शुक्ल ने आधुनिक काल को गद्य काल कहा है। इस काल में कहानी विधा लेखन के शुरुआती दौर से ही महिलाओं की सशक्त भूमिका रही है। राजेंद्र बाला घोष ( बंग महिला) की कहानियाँ उस समय के किसी भी लेखक की तुलना में उन्नीस नहीं है। मौजूदा समय में संचार साधनों के बढ़ते प्रसार व ब्लॉग के प्रचलन से महिला कहानीकारों की संख्या में गुणात्मक वृद्धि हुई है। ऊपर यह बताया गया है कि सुमन जी ने कहानी लोक से उठायी है। 'समाज' की जगह 'लोक' शब्द इसलिए प्रयोग किया गया कि 'समाज' 'सामाजिक संबंधों के जाल' तक सीमित होता है जबकि लोक की अवधारणा ज्यादा व्यापक है। लोक के भीतर भी अनेक धाराएँ होती है जो सुमन जी के इस संग्रह में मौजूद है क्योंकि इसमें गाँव- शहर दोनों जगहों की एवं उच्च- निम्न दोनों वर्गों की कहानियाँ है। कहानियों में बाहरी दुनिया का यथार्थ है तो व्यक्ति के भीतर की मानसिक उधेड़बुन भी है। संग्रह की ज्यादातर कहानियों की मुख्य पात्र स्त्री ही है कुछ कहानियाँ जैसे 'पश्चाताप' में पिता जो अपने इकलौते पुत्र की मृत्यु से दुःखी है वह ज्यादातर बात अपनी पत्नी 'तुलसी' की ही करता है इसी तरह 'निलंबन' कहानी की शुरुआत तो बलदेव मिश्रा से होती है लेकिन कहानी में वो अपनी पत्नी, बेटी, प्रोफेसर मोनिका कालरा और प्रिंसिपल (जो कि एक स्त्री ही है) से घिरे होते है। कहानी की शुरुआत में उनकी पत्नी उनसे इसी कारण खिन्न है कि उनके घर उनके निर्देशन में शोध करने वाली छात्रा हेमलता सोनाने के चाल-ढंग उन्हें पसंद नहीं आता और कहानी खत्म निलंबन पत्र से होती है जो प्रिंसिपल उन्हें यह कहते हुए देती है कि हेमलता सोनाने ने बलदेव मिश्रा के ऊपर आरोप लगाए है। वह यह सलाह भी देती है कि उनकी गलती हो या न हो वो इस मामले को 'मुलायमियत' से निपटा ले।

सुमन जी की कहानियाँ भूमंडलीकरण के बाद की है। भूमंडलीकरण ने संचार साधनों को बढ़ाकर व्यक्ति को पास ला दिया है लेकिन रिश्तों के बीच भावनात्मक संबंधों में भी दूरियाँ आई है। हमें यह आशा होती है कि हम जिससे बात करना चाहते है उससे हमारी बात हो जायेगी किंतु यदि सामने वाले का मन नहीं है तो वह किसी से यह भी कहलवा सकता है कि वह व्यक्ति अभी मौजूद नहीं है या कोई अन्य व्यक्ति ही कह सकता है कि अमुक व्यक्ति मौजूद नहीं है। 'मोल' कहानी में बूढ़ी अम्मा चंद्रा जिसकी उम्र 70 वर्ष है वह अपने बेटे चंद्रहास को फोन करने के लिए अपने घर से दूर पीसीओ तक आती है लेकिन उसकी बहू मना कर देती है कि चंद्रहास पास में नहीं है इस उपेक्षा से चंद्रा टूट जाती है और कहती है " आजकल ये जो मोबाइल और फोन का जो ज़माना आया है सारे रिश्तों, भावनाओं पर भी खाक डाल रहे हैं। जब बात न करनी हो मोबाइल ऑफ कर दो। इतनी जरूरी बात की खबर दी है पर पलट कर एक बार भी पूछने की जरूरत नहीं समझी कि हम जिंदा भी है या मर गए?"(2) चंद्रा रिश्तों में अपनत्व की कमी से अवसादमय हो जाती है। उसकी "आत्मा की भूख" उसे और उसके पति को संत्रास की स्थिति में ले आती है जिसका परिणाम होता है

आत्महत्या। यह कहानी प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी' और भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत' से आगे की कहानी है। 'बूढ़ी काकी' में मूल समस्या भौतिकता की है कि काकी की जरूरत ही उसके बेटे बहू पूरी नहीं करते जबकि संपत्ति काकी की है। 'चीफ की दावत' में माँ को व्यक्ति न मानकर वस्तु मान लिया गया है जो 'चीफ' के सामने आने लायक नहीं है जबकि 'मोल' कहानी में संवेदना की समाप्ति मूल समस्या है जो आजकल वृद्धजन झेल रहे हैं। उनके रहने के लिए घर बहुत है पर साथ में केवल सन्नाटा रहता है जो उनके भीतरी स्पंदन को भी शांत कर देता है और इसके जिम्मेदार भी कहीं न कहीं माँ- बाप ही होते हैं। गलाकाट प्रतियोगिता के दौर में आरम्भ से ही संतान के मन में आगे बढ़ने की चाह इतना भर देते हैं कि संस्कार में वह कब पिछड़ गया इसका उन्हें पता ही नहीं चल पाता और वो अकेले रहने को अभिशप्त हो जाते हैं लेकिन अपने किए का मोल नहीं चुका पाते।

तकनीकी युग में परिवर्तन इतनी तेजी से हो रहा है कि पीढ़ियों के बीच के अंतराल की चौड़ाई बढ़ती ही जा रही है। मन्नू भंडारी ने अपनी कहानी 'त्रिशंकु' में बताया है कि कैसे माँ बाप की स्थिति त्रिशंकु जैसे हो जाती है क्योंकि उन्होंने अपने समय में घर समाज से अलग जो निर्णय लिया उसका उन्हें गर्व होता है लेकिन बदलते समय के साथ लोक के मानक भी बदल जाते हैं जिससे पहले जो बातें विद्रोह की श्रेणी में आती हैं वह बाद में सामान्य हो जाती हैं और बदलते मूल्यों के साथ माँ- बाप कदमताल नहीं कर पाते जिससे बच्चों से उनकी दूरियाँ बढ़ जाती हैं। 'पश्चताप' कहानी में तुलसी और उसके पति परिवार के खिलाफ जाकर अंतर्जातीय विवाह करते हैं लेकिन जब उनका बेटा साहिल अपने से 10 साल बड़ी शादीसुदा मीना के साथ रिश्ते में आता है तो माँ बेटे से खिन्न हो जाती है और माँ- बाप तथा बेटे के मध्य मानसिक दूरियाँ बढ़ जाती हैं।

वर्तमान व्यवस्था में बाज़ार ने अपने पाँव इतना फैला लिए हैं कि व्यक्ति उपभोक्ता में परिवर्तित हो गया है। अतिरिक्त वस्तु वह इतनी इकट्ठा कर लेता है कि जरूरत की वस्तु खरीदना उसके लिए मुश्किल हो जाता है। विलासिता और आवश्यकता में फर्क करने के विवेक में गिरावट के कारण ही व्यक्ति स्वयं के द्वारा निर्मित मुसीबतों से घिरा रहता है और गलत रास्ते पर चलने लगता है और जब तक उसे इस बात का एहसास होता है तब तक देर हो चुकी होती है। इस कहानी संग्रह की पहली ही कहानी 'अतीत' में नताशा एक एस्कॉर्ट गर्ल बन जाती है क्योंकि वो दूसरों की नज़रों में स्वयं को रखकर अपने को देखने वालों में से है।

लेखिका ने ऊपर वर्णित नई समस्याओं के साथ लोक में मौजूद रूढ़वादिता और अंधविश्वासों को भी दर्ज किया है जिससे सबसे ज्यादा पीड़ित महिलाएं ही होती हैं। अब तो यह चिकित्सकीय और वैज्ञानिक रूप से मान्य हो गया है कि संतान लड़का होगा या लड़की यह पुरुष के गुणसूत्रों से तय होता है लेकिन अभी भी ज्ञान व जागरूकता के अभाव में इस बात के लिए औरतों को ताने सुनना पड़ता है कि यह केवल बेटियों की माँ है अभी ताकि पूत नहीं फला। 'छँगुरी' कहानी

में 'छँगुरी' की सास उसकी झाड़ फूंक करवाती है, टोना टोटका दिखाती है कि अगली बार लड़का ही हो। 'छँगुरी' का पति मुन्नर अपने हिसाब से डॉक्टरी जांच भी करवा के यह आश्वस्त रहता है कि अबकी तो लड़का ही होगा। जब 'छँगुरी' अत्यंत गंभीर हालत में होती है तब मुन्नर परेशान भी होता है और अपनी हैसियत के अनुसार जल्द से जल्द उसे अस्पताल लाने का प्रबंध भी करता है। 'छँगुरी' को जब आपरेशन थियेटर में ले जाया जाता है तो वह चिंतित भी होता है लेकिन जब मोटी डॉक्टर उससे कहती है- " बड़ी मुश्किल से तुम्हारी पत्नी और बच्चे को बचा पाए। बड़ी सुंदर बच्ची है, बहुत स्वस्थ।"(3) लेखिका लिखती है कि 'बच्ची' सुनते ही "मुन्नर तो जैसे बहरा हो गया हो। उसे तो बस डॉक्टर के होंठ हिलते दिखाई दे रहे थे।"(4) इसी तरह बेटे कि इच्छा 'मोल' कहानी में पीसीओ वाले की पत्नी हंसा को है जबकि उसके दो बेटियां पहले से है। आज लड़कियाँ लड़कों से किसी भी मामले में कम नहीं है बल्कि कुछ मामलों तो आगे ही है जैसे 2016 के ओलंपिक में भारत को लड़कियों के कारण ही पदक तालिका में स्थान मिला था। लेकिन समाज में जो पुत्र को लेकर अंधामोह अभी भी मौजूद है उसे 'मोल' कहानी में चंद्रा के माध्यम से व्यक्त किया है वो पीसीओ वाले से कहती है-आज बेटियाँ भी बेटों से किसी मामले में कम नहीं है। लेकिन, हमारा समाज कुछ ऐसे अनदेखे बंधनों में आज भी बंधा हुआ है। ये ऐसी धुंध है कि छँटने का नाम ही नहीं लेती है।"(5) लड़की के पैदा होने के बाद उस पर कैसे कैसे अलिखित बंधन समाज में मौजूद है यह 'भाग्य' कहानी में बताया गया है कि जब तरंग शाम के सुनसान जगह पर संगीत की ध्वनि से आकर्षित होकर जाती है और अरविंद उससे कहता है " अच्छा, तो यहाँ कैसे बेटा? यहाँ बड़ा एकांत है और लोगों का आना बड़ा कम रहता है, फिर लड़कियाँ, मेरा खयाल है, बिल्कुल नहीं आती होंगी, यहाँ?"(6) यह सुनकर तरंग को ऐसा लगा जैसे उसे झन्नाटेदार तमाचा पड़ा हो।

जब कही आने-जाने को लेकर इतनी समस्या है तो प्रेम को लेकर तो ( लड़कियों के) समाज का असहज होना तो तय ही है। उसमें भी यदि दूसरी जाति के लड़के से तो कहना ही क्या। 'जहर' कहानी में मिथिलेश दूसरी जाति की थी जिसके कारण उसकी सास और ननद उससे चिढ़ती है और चिढ़न की हद यह है कि, 20 साल में भी वो कम नहीं होती और दोनों मिलकर उसे अपने देवर को जहर देने के आरोप में गिरफ्तार करा देती है। 'मिलन' कहानी में भी नलिनी जब इरविन से मिलने गोवा जाती है तब इरविन की माँ उससे झूठ बोल देती है कि वो वैण्डी से ही शादी करेगा और अभी वह वैण्डी के साथ घूमने चला गया है।

सुमन जी स्त्री जीवन के कई पहलू और मन की कई परतो को उघाडकर पाठकों के सामने रखती है इस क्रम में बाल मनोविज्ञान भी सुमन सिंह की कलम से अछूता नहीं है। 'फैसला' कहानी में फहीम के माध्यम से लेखिका ने यह दिखाया है कि कैसे इंटरनेट की लत की वजह से बच्चे घर में झूठ बोलते है कि वह कोचिंग जा रहे। पब्जी, ब्लू व्हेल जैसे गेम किशोरावस्था को कैसे आक्रामक

बना रहे यह आए दिन अखबार में पढ़ने को मिलता है। फहीम भी ऐसी ही गलत आदतों की वजह से चिड़चिड़ा होता जा रहा है और वह अपने अभिभावकों से बहस भी करता है जिससे वह उसे बोर्डिंग स्कूल भेजने के बारे में तय कर लेते हैं। फहीम शुरू में तो बड़ा खुश रहता है लेकिन जैसे-जैसे जाने का समय नजदीक आता है वह घर और ममा- पापा के ज्यादा करीब आ जाता है। वह अपने दोस्त सलीम से कहता है- यार सलीम, जाना तो तय है मेरा। अब तक तो मैं बहुत खुश था। पर, जैसे-जैसे जाने का वक़्त पास आ रहा है, ये घर, दरवाजे ये कमरा, आँगन सब मुझे रोकते से लग रहे हैं।" (7)

'छँगुरी' कहानी में भी जब सब उसे 'छँगुरी' नाम से बुलाते हैं तो वह अपनी माँ से शिकायत करती है- "अम्मा इत्ता खराब नाम हमार कांहे रख दिहिस, हमका बहुत सरम आवत है" (8) उसकी माँ हँसते हुए कहती है "का करी बिटिया, भगवानै तुमका जे नाम दिहिन, तुमही बताव... का और कौनों को नाम 'छँगुरी' हुइ सकत है? जेहिका छा अँगुरी होई उहे तो हुई है 'छँगुरी', आंय?" (9) इस व्यंग्य से लेखिका ने उस मनोवृत्ति पर चोट की जिसमें दिव्यांगों के प्रति सहानुभूति तक नहीं होती। लेखिका ने अपनी कहानियों में स्त्री, बूढ़े और वंचित वर्ग की अनेक समस्याओं को पाठकों के सम्मुख रखा। इन कहानियों की एक खास विशेषता यह है कि इसमें पात्र ही अपनी बात ज्यादा कहते हैं किंतु कहीं-कहीं लेखिका सूत्र शैली में अपनी बात को रखती है जिससे कहानी का मर्म ही खुल जाता है जैसे 'अतीत' कहानी का यह वाक्य कि - अपने मूल्यों को खोकर उसने मूल्यों की कीमत पहचानी हो शायद।" (10) पूरी कहानी को भीतर से खोल देता है। लेखिका ने पात्रों के रहन-सहन, रंग-ढंग के हिसाब से भाषा का प्रयोग किया है। खड़ी बोली, भोजपुरी के अलावा बल्डी (छोटी पहाड़ी) जैसे मालवी शब्द भी हैं। ज्यादातर कहानियाँ वर्तमान से फ्लैशबैक के माध्यम से अतीत में होते हुए वर्तमान में आती हैं। जहर जैसी कहानी में 20 साल से ज्यादा का फ्लैशबैक थोड़ा सा पाठकों को असहज कर देती है लेकिन अतीत से होकर पुनः वर्तमान में आना कथ्य को गाढ़ा कर देता है जिससे पूरी छवि अंत तक पाठकों के सामने स्पष्ट हो जाती है।

### सन्दर्भ सूची -

1. सुमन सिंह, 'छँगुरी' कहानी संग्रह का ब्लर्ब अनंग प्रथम संस्करण, दिल्ली - 2016।
2. वहीं पेज 60
3. वहीं पेज 47
4. वहीं
5. वहीं पेज 62
6. वहीं पेज 51

7. वहीं पेज 22
8. वहीं पेज 42
9. वहीं पेज 43
10. वहीं पेज 17

## बुंदेली भाषा की राजनीति : एक पड़ताल

किसान गिरजाशंकर कुशवाहा  
एड० अर्चना मिश्रा<sup>1</sup>

**शोधसार** - बुंदेली भाषा बुंदेलखंड में बोली जाने वाली मुख्य भाषा है। इसे बुंदेलखंडी के नाम से भी जाना जाता है। बुंदेलखंड को हम लोग 'अखंड बुंदेलखंड' मानते हैं। बुंदेली का विकास अपभ्रंश भाषा से 10वीं सदी में हुआ। 12वीं सदी में जगनिक द्वारा रचित आल्हा चरित (परमाल रासो) को बुंदेली का पहला महाकाव्य और जगनिक को पहला कवि माना जाता है। बुंदेली की लगभग 25 बोलियाँ प्रचलित हैं। भाषा की राजनीति का एक अपना इतिहास है। भाषा की राजनीति सदियों से होती चली आ रही है। समकालीन वैश्विक, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय परिदृश्य को देखकर यही लगता है कि भाषा के नाम पर राजनीति सदियों तक होती भी रहेगी। बुंदेली भाषा की राजनीति करने करने वालों में स्थानीय नेता से लेकर राष्ट्रीय नेता समेत प्रधानमंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी भी शामिल हैं और इस भाषायी अस्मिता की लड़ाई और राजनीतिक चेतना में लेखक और पत्रकार मुख्य भूमिका निभा रहे हैं। भाषा और संस्कृति के संरक्षण और विकास में राजनीति और सरकार का पुरातन काल से लेकर आज तक अहम योगदान रहा है इसलिए भाषा की राजनीति होती है। उसी क्रम में बुंदेली भाषा की राजनीति होती आ रही है और जब तक बुंदेली भाषा भारत के संविधान 'भारत विधान' की आठवीं अनुसूची में शामिल नहीं हो जाती और अखंड बुंदेलखंड की राजभाषा नहीं बन जाती, तब तक बुंदेली भाषा की राजनीति होती रहनी चाहिए।

**कुंजी शब्द** - बुंदेली भाषा, बुंदेलखंडी, बुंदेलखंड, अखंड बुंदेलखंड, बुंदेली भाषा की राजनीति, राजनीति, बुंदेलखंड राज्य, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, संविधान, भारत विधान, राजभाषा, आठवीं अनुसूची।

**प्रस्तावना** - बुंदेली भाषा बुंदेलखंड में बोली जाने वाली मुख्य भाषा है। इसे बुंदेलखंडी के नाम से भी जाना जाता है। बुंदेलखंड को हम लोग 'अखंड बुंदेलखंड' मानते हैं। बुंदेली का विकास अपभ्रंश

<sup>1</sup> शोधार्थी - हिन्दी विभाग, बुंदेलखंड महाविद्यालय, झाँसी  
पूर्व छात्रा - विधि विभाग, बुंदेलखंड महाविद्यालय, झाँसी

भाषा से 10वीं सदी में हुआ। 12वीं सदी में जगनिक द्वारा रचित आल्हा चरित (परमाल रासो) को बुंदेली का पहला महाकाव्य और जगनिक को पहला कवि माना जाता है। ध्यान रहे कि बुंदेलखंड में आल्हा गायन के ऐतिहासिक परंपरा के कारण आल्हा विश्व की सबसे बड़ी लोकगाथाओं में आज भी सुशोभित हो रहा है। बुंदेली की लगभग 25 बोलियाँ प्रचलित हैं। बुंदेली भाषा-भाषी क्षेत्र के बारे में हमारी (कुशराज) ये अवधारणा है - " बुंदेली भाषा-भाषियों की जनसंख्या दस-बारह करोड़ है। बुंदेली भाषा-भाषी प्रदेश 'अखंड बुंदेलखंड' में उत्तर प्रदेश के आठ जिले - झाँसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर, महोबा, बाँदा, चित्रकूट, फतेहपुर और मध्य प्रदेश के चौबीस जिले - टीकमगढ़, निवाड़ी, सागर, पन्ना, छतरपुर, दमोह, जबलपुर, दतिया, शिवपुरी, गुना, अशोकनगर, ग्वालियर, भिंड, मुरैना, श्योपुर, विदिशा, भोपाल, नरसिंहपुर, नर्मदापुरम, रायसेन, सीहोर, छिंदवाड़ा, सिवनी, बालाघाट आदि आते हैं। इन्हीं बत्तीस जिलों को हम मानक बुंदेली भाषा-भाषी क्षेत्र मानते हैं।"<sup>1</sup>

इस अवधारणा में हमने बुंदेली भाषा-भाषी क्षेत्र के अन्तर्गत उन जिलों को रखा है, जहाँ आम जनता दैनिक बोलचाल से लेकर सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि में बुंदेली भाषा का प्रयोग करती है और भोपाल जैसे जिलों को इस कारण बुंदेली भाषा-भाषी क्षेत्र माना है क्योंकि कई दशकों से वहाँ बुंदेली भाषा के विकास और संरक्षण हेतु वैश्विक स्तर पर काम हो रहा है।

यदि हम बुंदेली की बोलियों की बात करें तो "'बुंदेली भाषा-भाषी क्षेत्र दर्शन' के अन्तर्गत आलोचक डॉ० राम नारायण शर्मा जनपदीय क्षेत्र विशेष और जाति विशेष में बुन्देली भाषा के नाम का उल्लेख करते हैं, जिन्हें हम (कुशराज) बुंदेली की बोलियाँ मानते हैं। उनके अनुसार अग्रलिखित बारह बोलियाँ हैं - शिष्ट हवेली, खटोला, बनाफरी, लुधियातीं, चौरासी, ग्वालियरी, भदावरी, तवरी, सिकरवारी, पवांरी, जबलपुरी, डंगाई। जबकि बुंदेलखंड में रहने वाले वाली जातियों की अपनी-अपनी बोलियाँ हैं। जातियों के आधार पर बुंदेली की प्रमुख बोलियाँ और उनकी जातियाँ इस प्रकार हैं - कछियाई (काछी/कुशवाहा), ढिंमरयाई (ढीमर/रायकवार), अहिरयाई (अहीर/यादव), धुबियाई (धोबी/रजक), लुधियाई (लोधी/राजपूत), बमनऊ (बामुन/ब्राह्मण/पंडित), किसानी (किसान), बनियाऊ (बनिया/व्यापारी), ठकुराऊ (ठाकुर/बुंदेला), चमरयाऊ (चमार/अहिरवार), गड़रियाई (गड़रिया/पाल), कुमरयाऊ या कुम्हारी (कुम्हार/प्रजापति), कलरऊ (कलार/राय), बेड़िया (बेड़नी/आदिवासी) आदि। यद्यपि लुधियातीं और लुधियाई बोली एक ही है इसलिए डॉ० रामनारायण शर्मा द्वारा प्रस्तुत उपर्युक्त बारह (12) बोलियाँ और हमारे द्वारा प्रस्तुत तेरह (13) बोलियाँ मिलाकर बुन्देली भाषा की 25 बोलियाँ मुख्य रूप से प्रचलित हैं। इनके अलावा भी बोलियाँ हैं, जिनका अभी संज्ञान में आना अपेक्षित है।"<sup>2</sup>

इस प्रकार हम लोग मानते हैं कि हर भाषा किसी क्षेत्र या राज्य या राष्ट्र विशेष की मातृभाषा और उसकी संस्कृति की संवाहिका होती है। यदि भाषा विलुप्त हो जाती है तो वहाँ की संस्कृति भी विलुप्त हो जाती है। इसलिए यदि हमें दुनिया और भारत देश को बहुभाषायी और बहुसांस्कृतिक बनाए रखना है तो हर छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी भाषा को जीवित रखना होगा और उसका संरक्षण करके उसके ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में विकसित होने के द्वार खोलने होंगे। भाषा और संस्कृति के संरक्षण और विकास में राजनीति और सरकार का पुरातन काल से लेकर आज तक अहम योगदान रहा है इसलिए भाषा की राजनीति होती है। उसी क्रम में बुंदेली भाषा की राजनीति होती आ रही है और जब तक बुंदेली भाषा भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल नहीं हो जाती और अखंड बुंदेलखंड की राजभाषा नहीं बन जाती, तब तक बुंदेली भाषा की राजनीति होती रहनी चाहिए। हम दोनों 'भारत के संविधान' को 'भारत विधान' नाम देना उचित समझते हैं क्योंकि जैसे अंग्रेजों के बनाए कानून इंडियन पीनल कोड को बदलकर 'भारतीय न्याय संहिता' बनाई गई और अंग्रेजों की दासता की निशानी मिटाई गई। वैसे ही नए भारत में तथाकथित दलित वर्ग / बहुजन वर्ग व्यक्ति विशेष को संविधान का जनक बताता है जबकि संविधान निर्माण समिति में अनेक नीतिनिर्माता थे। उन सबको उनका सम्मान मिल सके। इसके लिए सरकार को संविधान का नाम बदलकर 'भारत विधान' रखकर नया इतिहास रचना चाहिए।

### बुंदेली भाषा की राजनीति -

भाषा की राजनीति का एक अपना इतिहास है। भाषा की राजनीति सदियों से होती चली आ रही है। समकालीन वैश्विक, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय परिदृश्य को देखकर यही लगता है कि भाषा के नाम पर राजनीति सदियों तक होती भी रहेगी। भारतीय संदर्भ में भाषा की राजनीति की पड़ताल हमने (कुशराज झाँसी) अपने लेख 'भाषा की राजनीति' में इस प्रकार की है - "भारत की आजादी के बाद जब राज्यों का पुर्नगठन हो रहा था तब भाषा के आधार पर राज्यों का पुर्नगठन उचित है या नहीं, इसकी जाँच के लिए संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने इलाहाबाद संविधान सभा के अवकाशप्राप्त न्यायाधीश एस० के० धर की अध्यक्षता में एक चार सदस्यीय आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग ने भाषा के आधार पर राज्यों के पुर्नगठन का विरोध किया और प्रशासनिक सुविधाओं के आधार पर राज्यों के पुर्नगठन का समर्थन किया। और फिर धर आयोग के निर्णयों की परीक्षा करने के लिए कांग्रेस कार्य समिति ने अपने जयपुर अधिवेशन में जवाहर लाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल और पट्टाभि सीतारमैया की एक समिति का गठन किया। इस समिति ने भाषायी आधार पर राज्यों पुर्नगठन की माँग को खारिज कर दिया। नेहरू, पटेल एवं सीतारमैया (जे०वी०पी० समिति) समिति की रिपोर्ट के बाद मद्रास राज्य के तेलगू-भाषियों ने पोटी श्री रामुल्लू के नेतृत्व में आन्दोलन छेड़ दिया और 56 दिन के आमरण अनशन के बाद 15 दिसम्बर 1952 ई० को

रामुलू की मृत्यु हो गई। रामुलू की मृत्यु के बाद प्रधानमंत्री नेहरू ने तेलगूभाषियों के लिए पृथक 'आन्ध्र प्रदेश' के गठन की घोषणा कर दी। 01 अक्टूबर 1953 ई० को आन्ध्र प्रदेश राज्य का गठन हो गया। यह राज्य स्वतंत्र भारत में भाषा के आधार पर गठित होने वाला पहला राज्य था। उस समय आन्ध्रप्रदेश की राजधानी कर्नूल थी। इसी प्रकार 01 मई 1960 ई० को मराठी और गुजराती भाषियों के बीच संघर्ष के कारण बम्बई राज्य का बंटवारा करके महाराष्ट्र एवं गुजरात नामक दो राज्यों की स्थापना की गई। और 01 नवम्बर 1966 ई० को पंजाब को विभाजित करके पंजाब (पंजाबी भाषी) एवं हरियाणा (हिन्दी भाषी) दो राज्य बना दिए गए।<sup>3</sup>

'भाषा की राजनीति' नामक लेख में ही 'बुंदेली भाषा की राजनीति' विषय पर इस तरह प्रकाश डालने का प्रयास किया है - "आज भी भाषा की राजनीति बहुत हो रही है। पूर्वांचल क्षेत्र के भोजपुरीभाषी भोजपुरी को संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित कराने हेतु आन्दोलन कर रहे हैं और वहीं दूसरी ओर बुन्देलीभाषी तो पृथक बुन्देलखण्ड राज्य की माँग कर रहे हैं।"<sup>4</sup>

बुंदेली भाषा की राजनीति करने करने वालों में स्थानीय नेता से लेकर राष्ट्रीय नेता यहाँ तक प्रधानमंत्री भी शामिल हैं और इस भाषायी अस्मिता की लड़ाई और राजनीतिक चेतना में लेखक और पत्रकार मुख्य भूमिका निभा रहे हैं। जिनके बारे में हम यहाँ विवेचन कर जा रहे हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर बुंदेली भाषा की राजनीति और राजनीति में बुंदेली के प्रथम प्रयोग के साक्ष्य हमें बुंदेली की पहली पत्रिका 'मधुकर' के सन 1943 में प्रकाशित अंक 'बुंदेलखंड प्रांत निर्माण विशेषांक' में मिलते हैं। जिसके संपादक बनारसीदास चतुर्वेदी जी थे।<sup>5</sup>

इसी क्रम हम पाते देखते हैं कि 21वीं सदी बुंदेली भाषा की राजनीति में मील का पत्थर साबित हुई है क्योंकि सूचना क्रांति के इस युग में सोशल मीडिया के माध्यम से हर कोई अपनी आवाज दुनिया के हर कोने तक पहुँचा पा रहा है इसलिए बुंदेलखंड की जमीनी हकीकत से जुड़े छात्रनेता और युवा लेखक कुशराज झाँसी उर्फ सतेंद सिंह किसान बुंदेली और बुंदेलखंड के हक में समय-समय पर सोशल मीडिया और ब्लॉग के माध्यम से आवाज उठाते रहे हैं। उन्होंने 09 दिसंबर 2019 को अपनी फेसबुक पोस्ट में लिखा था - "बुन्देलखण्ड राज्य निर्माण हो...बुन्देली भाषा संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल हो... हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट की भाषा हिन्दी हो...।"<sup>6</sup> फिर उन्होंने 13 जनवरी 2020 को अपने ब्लॉग 'कुसराज की आबाज' पर 'बुंदेली बुंदेलखंड आंदोलन' के अंतर्गत लिखा - "बुंदेली हमारी मातभासा हैगी, इए सम्मान और सांबिधानिक अधिकार दिलाबो हमाओ फरज बनत...।"<sup>7</sup> इसके बाद उन्होंने फिर से 24 जुलाई 2020 को 'अखंड बुंदेलखंड महापंचयात' संगठन की स्थापना करके अपनी ई-पत्रिका 'अखंड बुंदेलखंड' में आवाज उठाई -

**जब तेलगू भासियन के लानें आंध्रा और तेलंगाना राज्ज**

तमिलन के लानें तमिलनाडु  
 मराठियन के लानें महाराष्ट्र  
 गुजरातियन के लानें गुजरात  
 बंगालियन के लानें बंगाल  
 तो बुंदेलखंडियन के लानें अखंड बुंदेलखंड काय नई?

बुंदेली भासियन के लानें अखंड बुंदेलखंड राज्ज बनें चज्जे और उते की राजभासा बुंदेली-किसानी...।"<sup>8</sup>

बुंदेलीभाषी राज्य बुंदेलखंड के बारे में हम लोग 30 अक्टूबर 2020 को जागरण न्यूज पोर्टल पर प्रकाशित पत्रकार राजेश शर्मा की रिपोर्ट '64 साल पहले खत्म हुआ था बुन्देलखण्ड राज्य का अस्तित्व' में बहुत जरूरी तथ्य पाते हैं, जो इस प्रकार हैं - स्वतंत्र भारत में जब राज्यों का गठन हुआ तब संविधान सभा ने 12 मार्च सन 1948 को बुंदेलीभाषी राज्य 'बुंदेलखंड' का गठन किया। जिसकी राजधानी नौगांव (छतरपुर) रही और कामना प्रसाद सक्सेना मुख्यमंत्री रहे। 8 साल 7 माह तक बुंदेलखंड राज्य का अस्तित्व बना रहा और 31 अक्टूबर 1956 को बुंदेलखंड के कुछ जिलों का उत्तर प्रदेश और कुछ जिलों का मध्य प्रदेश में विलय कर दिया गया।<sup>9</sup>

इस प्रकार सन 1956 के बाद से ही बुंदेलीभाषी अपनी भाषा और संस्कृति की अस्मिता की रक्षा हेतु पृथक बुंदेलखंड राज्य निर्माण हेतु आंदोलन करते आ रहे हैं। यह आंदोलन आज भी जारी है। बुंदेलखंड राज्य निर्माण हेतु प्रयासरत आंदोलनकारी एवं बुंदेलखंड क्रान्ति दल के अध्यक्ष सत्येन्द्र पाल सिंह कहते हैं - "प्राचीन काल में भी बुन्देलखण्ड का अस्तित्व रहा है। तब देश में 16 महाजनपद थे, जिसमें बुन्देलखण्ड राज्य था, जिसे 'चेदी' नाम से जाना जाता था। आजाद भारत में भी 8 साल 7 माह तक बुन्देलखण्ड राज्य रहा है। चूँकि फजल अली आयोग ने भाषा के आधार पर राज्य बनाने की सहमति दी थी, पर इसके बाद कोई आयोग का गठन नहीं किया गया। तब 14 राज्य व 6 केन्द्र शासित प्रदेश थे, जबकि अब 28 राज्य व 8 केन्द्र शासित प्रदेश हैं। सरकारों ने नए 10 राज्य किस आधार पर बनाए, इसका जवाब किसी के पास नहीं है।"<sup>10</sup>

इसी प्रकार बुंदेलखंड के जीवंत विश्वकोश कहे जाने वाले विद्वान और राजनेता हरगोविन्द कुशवाहा कहते हैं - "बुन्देलखण्ड की संस्कृति सबसे प्राचीन है। आजादी के बाद विन्ध्य प्रान्त में बुन्देलखण्ड राज्य का अस्तित्व भी था। साढ़े आठ साल बाद राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश पर बुन्देलखण्ड राज्य को उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के बीच बाँट दिया गया। इसके बाद से ही अलग राज्य की माँग की जा रही है।"<sup>11</sup>

बुंदेली भाषा के संवैधानिक अधिकारों के आंदोलन और बुंदेली भाषा की राजनीति करने वालों नेताओं और बुंदेलीभाषी जनता को मनमंदिर में अपनी अमिट छवि स्थापित करने हेतु 29

फरवरी 2020 को भारत सरकार और उत्तर प्रदेश सरकार की महत्वाकांक्षी परियोजना 'बुंदेलखंड एक्सप्रेसवे' के शिलान्यास के अवसर पर चित्रकूट में जनसभा को बुंदेली भाषा में संबोधित करते हुए यशस्वी प्रधानमंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी ने कहा - "चित्रकूट में राम जी अपने भाई लखन और सिया जी के साथ इतई निवास करत हैं। जासैं हम मर्यादा पुरुषोत्तम राम की तपोस्थली में आप सभई को अभिनंदन करत हौं।"<sup>12</sup>

इसके बाद 1857 की क्रांति यानी प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की अग्रदूत झाँसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई की जयंती के उपलक्ष्य में 19 नवंबर 2021 को अखंड बुंदेलखंड की प्रस्तावित राजधानी झाँसी में राष्ट्र रक्षा समर्पण पर्व के अवसर पर यशस्वी प्रधानमंत्री माननीय नरेंद्र मोदी जी बुंदेली भाषा से अपना संबोधन देकर बुंदेली भाषा के संवैधानिक अधिकारों की प्राप्ति मार्ग में आ रही बाधाओं को दूर करने का संदेश दिया। उन्होंने अपना संबोधन इस प्रकार शुरू किया - "जौन धरती पै हमाई रानी लक्ष्मीबाई जू ने, आजादी के लाने, अपनो सबई न्योछार कर दओ, वा धरती के बासियन खों हमाओ हाथ जोड़ के परनाम पौंचे। झाँसी ने तो आजादी की अलख जगाई हती। इतै की माटी के कन कन में, बीरता और देस प्रेम बसो है। झाँसी की वीरांगना रानी लक्ष्मी बाई जू को, हमाओ कोटि कोटि नमन।"<sup>13</sup>

बुंदेली भाषा को संवैधानिक मान्यता और पृथक बुंदेलखंड राज्य निर्माण के प्रबल समर्थक, बाँदा-हमीरपुर सांसद माननीय कुँवर पुष्पेंद्र सिंह चंदेल ने 03 दिसंबर 2021 को लोकसभा में बुंदेली भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने हेतु निजी विधेयक प्रस्तुत करते हुए कहा - "अध्यक्ष जी, बुंदेलखंड क्षेत्र एक विशेष संस्कृति वाला क्षेत्र है और वहाँ की अपनी एक बुंदेली भाषा है। देश में करीब 60 करोड़ लोग हिन्दी भाषा बोलने वाले हैं और इन लोगों में से करीब 12 प्रतिशत लोग बुंदेली भाषा बोलते हैं। भाषा से ही क्रियाओं और विभिन्न संज्ञाओं का ज्ञान होता है और भाषा के द्वारा ही मनुष्य की संवेदनाओं और विचारों को व्यक्त किया जाता है। इस कारण से भारतीय संस्कृति में भाषा पर हर संभव प्रकार से विचार किया गया है। यह उसी का प्रमाण है कि भारतीय संस्कृति के पास साहित्य और भाषा का विपुल भंडार है। संस्कृत भाषा भारतीय भाषाओं सहित विश्व की सभी भाषाओं की जननी है। इसके परिणामस्वरूप भारतवर्ष में 22 भाषाएँ अनुसूचित हैं और सैकड़ों भाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। इन बोलियों द्वारा ही भारत के पास असीम वैचारिक शक्ति है। संस्कृत की तरह इन भाषाओं के पास भारत के उत्थान और विकास के लिए मार्गदर्शक शक्ति है जिसको और ज्यादा सहजने तथा संवारने की जरूरत है। यदि इनमें कुछ भाषाओं को विशेष संवैधानिक संरक्षण प्राप्त होगा, तो नए भारत का निर्माण और तेजी से होगा। महोदय, मेरी मांग है कि बुंदेलखंड में 'आल्हा' गायन बुंदेली भाषा में होता है। यह दुनिया का एकमात्र ऐसा खंडकाव्य है जो हजारों वर्षों से आज तक जीवित है। दुनिया के विकसित देशों के हजारों छात्र वहाँ गाई जा रही

वीरता की गाथाओं पर शोध कर रहे हैं। महारानी लक्ष्मी बाई हमारे यहां से आईं। आपने हमेशा सुना होगा – 'बुंदेले हर बोलों के मुंह हमने सुनी कहानी थी, खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।' मेरा निवेदन है कि आठवीं अनुसूची में भारत सरकार बुंदेली भाषा को जोड़े, ताकि वहाँ अपनी भाषा समझने वाले छात्र प्रतियोगी परीक्षाओं में उच्च स्तर पर पहुंच सकें और उच्च पदों पर सुशोभित हो सकें।<sup>14</sup>

संसद में सांसद कुँवर पुष्पेंद्र सिंह चंदेल द्वारा बुंदेली भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने हेतु पेश किए गए निजी विधेयक के बाद राष्ट्रीय स्तर पर बुंदेली राजनैतिक विमर्श का केंद्र बन गई और फिर इसके बाद जब 28 फरवरी 2022 को उत्तर प्रदेश विधानसभा में झाँसी के किसान नेता और गरौठा विधायक माननीय जवाहरलाल राजपूत ने अपनी बुंदेली भाषा में विधायक पद की शपथ ली। तब से हर बुंदेलीभाषी अपनी मातृभाषा और मातृभूमि की अस्मिता की रक्षा खातिर हर तरीके से लड़ने को तैयार हो गया। क्योंकि यदि उसकी भाषा को मान-सम्मान नहीं मिलेगा और उसकी संस्कृति भी संकट में पड़ जाएगी। इसकिए वह अपनी संस्कृति की रक्षा खातिर सजग है। जवाहर लाल राजपूत बुंदेलखंड के एकमात्र विधायक रहे, जिन्होंने क्षेत्रीय भाषा में शपथ ली थी। देखिए उनकी शपथ के अंश - "हम जवाहर लाल राजपूत, जो विधानसभा के सदस्य निर्वाचित भए हैं। भगवान को कौल खाकें कैरए हैं, कै हम विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के लानें सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखें। हम भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखें और जी पद खों हम ग्रहण करबे बारे हैं, ऊके कर्तव्यन कौ श्रद्धा पूर्वक पालन करें।"<sup>15</sup>

**निष्कर्ष** - उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि बुंदेली भाषा की राजनीति बुंदेली भाषा को कानूनी मान्यता दिलाने हेतु यानी भारत के संविधान 'भारत विधान' की आठवीं अनुसूची में शामिल कराने हेतु की जा रही है। हम सबके लिए ये हर्ष की बात है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति - 2020 में शिक्षा के माध्यम के रूप में क्षेत्रीय भाषाओं / स्थानीय भाषाओं / मातृभाषाओं के अन्तर्गत बुंदेली भाषा को भी प्राथमिक शिक्षा का माध्यम बनाया गया है और प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक में बुंदेली भाषा को स्वतंत्र विषय के रूप में पढ़ाए जाने का यथोचित प्रावधान भी किया गया है। बुंदेली भाषा को सर्वैधानिक मान्यता मिल जाने से सिविल सेवा, केंद्रीय सेवाओं और राज्य सेवाओं समेत हर सरकारी नौकरी से बुंदेलीभाषी चयनित होंगे क्योंकि अपनी भाषा में हर जंग जीती जा सकती है।

**संदर्भ -**

<sup>1</sup> किसान गिरजाशंकर कुशवाहा 'कुशराज झाँसी' एवं दीपक नामदेव, बुंदेली भाषा और साहित्य का विकास एवं संरक्षण, बुंदेली झलक, झाँसी, 14 मार्च 2024

<https://bundelijhalak.com/bundeli-bhasha-aur-sahitya-ka-vikas/>

<sup>2</sup> किसान गिरजाशंकर कुशवाहा 'कुशराज झाँसी' एवं दीपक नामदेव, बुंदेली भाषा और साहित्य का विकास एवं संरक्षण, बुंदेली झलक, झाँसी, 14 मार्च 2024

<https://bundelijhalak.com/bundeli-bhasha-aur-sahitya-ka-vikas/>

<sup>3</sup> किसान गिरजाशंकर कुशवाहा 'कुशराज झाँसी', भाषा की राजनीति, कुसराज की आबाज, झाँसी, 09 मई 2024

[https://kushraaz.blogspot.com/2024/05/blog-post\\_25.html](https://kushraaz.blogspot.com/2024/05/blog-post_25.html)

<sup>4</sup> किसान गिरजाशंकर कुशवाहा 'कुशराज झाँसी', भाषा की राजनीति, कुसराज की आबाज, झाँसी, 09 मई 2024

[https://kushraaz.blogspot.com/2024/05/blog-post\\_25.html](https://kushraaz.blogspot.com/2024/05/blog-post_25.html)

<sup>5</sup> नरेंद्र अड़जरिया, भारत में आंचलिक पत्रकारिता और बुंदेलखंड, यश पब्लिकेशन, नई दिल्ली, संस्करण 2023, पृष्ठ 54

<sup>6</sup> कुशराज, फेसबुक पोस्ट, कुशराज का फेसबुक पेज, झाँसी, 9 दिसंबर 2029

<https://www.facebook.com/126613095401617/posts/pfbid02WhoTTrBXZUkvFfNg5uDMMpoGe1SLiJroDtXR9qBtHe8JHdKuDAXWVhFJPCy1WPNsl/?app=fbl>

<sup>7</sup> कुसराज झाँसी, बुंदेली बुंदेलखंड आंदोलन, कुसराज की आबाज, झाँसी, 13 जनवरी 2020

<https://kushraaz.blogspot.com/2020/01/blog-post.html?m=1>

<sup>8</sup> सतेंद सिंह किसान, बुंदेलखंडियन के लानें अखंड बुंदेलखंड काय नई?, अखंड बुंदेलखंड महौंपंचयात, झाँसी, 24 जुलाई 2020

[https://akhandbundelkhand.blogspot.com/2020/07/blog-post\\_24.html](https://akhandbundelkhand.blogspot.com/2020/07/blog-post_24.html)

<sup>9</sup> राजेश शर्मा, 64 साल पहले खत्म हुआ था बुन्देलखण्ड राज्य का अस्तित्व, जागरण, झाँसी, 30 अक्टूबर 2020

<https://www.jagran.com/uttar-pradesh/jhansi-city-20987207.html>

<sup>10</sup> राजेश शर्मा, 64 साल पहले खत्म हुआ था बुन्देलखण्ड राज्य का अस्तित्व, जागरण, झाँसी, 30 अक्टूबर 2020

<https://www.jagran.com/uttar-pradesh/jhansi-city-20987207.html>

<sup>11</sup> राजेश शर्मा, 64 साल पहले खत्म हुआ था बुन्देलखण्ड राज्य का अस्तित्व, जागरण, झाँसी, 30 अक्टूबर 2020

<https://www.jagran.com/uttar-pradesh/jhansi-city-20987207.html>

12 प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, जब बुंदेली भाषा में पीएम मोदी ने कहा "सभई को अभिनंदन करत हौं" तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा सभास्थल, पत्रिका, चित्रकूट, 29 फरवरी 2020

<https://www.patrika.com/chitrakoot-news/modi-narendra-modi-bundelk-hand-express-way-chitrakoot-5839448>

13 प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी, 'झाँसी, उत्तर प्रदेश में राष्ट्र रक्षा समर्पण पर्व पर प्रधानमंत्री के संबोधन का मूल पाठ', पीएमइंडिया, नईदिल्ली, 19 नवंबर 2021

<https://www.pmindia.gov.in>

14 सांसद कुँवर पुष्पेंद्र सिंह चंदेल, लोकसभा बुंदेली भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने हेतु लोकसभा में प्रस्तुत निजी विधेयक, लोकसभा टीवी, नईदिल्ली, 3 दिसंबर 2021

<https://www.facebook.com/share/v/QRBT2m2LwFP1RrVw/?mibextid=oFDknk>

15 विधायक जवाहरलाल राजपूत, 'जौन पद खों हम ग्रहण करबे बारे हैं, ऊके कर्तव्यन कौ श्रद्धा पूर्वक पालन करें', अमर उजाला, झाँसी, 28 मार्च 2022

<https://www.amarujala.com/uttar-pradesh/jhansi/we-are-about-to-accept-jaun-s-post-who-should-follow-our-duties-with-devotion-jhansi-news-jhs217564873>

## नागार्जुन के उपन्यास 'कुम्भीपाक' में चित्रित स्त्री संघर्ष

अवनीश सिंह नरवरिया  
डॉ. सोलंकी प्रतिभा<sup>1</sup>

सारांश -

प्रकृति और पुरुष के समन्वय से ही संसार की सृष्टि संभव है, पुरुष प्रकृति से ही विषम परिस्थितियों में अनुकूल शक्ति प्राप्त करता है। इसी शक्ति के सहारे मनुष्य सदियों जीवन जीने के लिए प्रयत्नशील है। विश्व के इतिहास, विशेषतः भारतीय इतिहास को देखा जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक काल को छोड़कर, न तो भारतीय स्त्री कभी स्वावलम्बी बन पाई और न तो पुरुष अपने अहम से मुक्त हो पाया। कुछ अपवादों को छोड़कर, प्राचीनकाल से ही स्त्री की अस्मिता को उभरने का मौका ही नहीं मिला। उसकी पहचान एक गुलाम, नौकरानी, कमजोर के रूप में करायी गयी। नारी अस्मिता के लिए अनेक बाधाएँ प्राचीनकाल में भी थी और आज भी हैं, पर आधुनिकता के आरंभ से स्त्री जागरूकता का दौर आरंभ हुआ। सन् 1970 के बाद तो परंपरागत पुरुष प्रधान व्यवस्था को तोड़कर नारी अपनी अस्मिता को बनाए रखने का प्रयास करने लगी है। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में ऐसे ही स्त्रीपात्रों को विशेष स्थान देते हुए उनके सामाजिक संघर्ष और विवशता को उजागर किया है। जिसमें विधवाविवाह, अनमेल विवाह, दहेजप्रथा, बलात्कार, अशिक्षा आदि। 'कुम्भीपाक' उपन्यास में नागार्जुन इन सारी समस्याओं को उद्घाटित करते हुए स्त्री मुक्ति के लिए शिक्षा और आर्थिक स्वावलंबता की वकालत करते हैं।

**कुंजी शब्द** - प्रकृति, पुरुष, कुम्भीपाक, उपन्यास, नागार्जुन, वैदिक काल, भारतीय स्त्री, सामाजिक संघर्ष, नारी अस्मिता, स्त्री मुक्ति, शिक्षा, आर्थिक स्वावलंबता।

कुम्भीपाक उपन्यास स्त्री जिजीविषा की कीमत पर फलते-फूलते नरक की कहानी है। उपन्यास में वर्णित एक ही मकान में रहने वाले छः किराएदारों की जीवनचर्या पर केन्द्रित यह उपन्यास हमारे विकासमान नागर जीवन के जिस सामाजिक यथार्थ की परतें खोलता है, वह

<sup>1</sup> शोधार्थी, हिंदी विभाग, माता जीजाबाई शासकीय कन्या महाविद्यालय, इंदौर।

शोध निर्देशक एवं विभागाध्यक्ष (हिंदी विभाग), माता जीजाबाई शासकीय कन्या महाविद्यालय, इंदौर।

सदियों से समूचे भारतीय जीवन का यथार्थ रहा है, क्योंकि स्त्री के प्रति पदार्थवादी नज़रिये में अब तक कोई खास कमी आई नहीं है। आर्थिक अभावों में पिसती स्त्री किस प्रकार भोगवाद की भट्टी में झोंक दी जाती है, उनकी पीड़ा और मुक्तिकामी छटपटाहट को नागार्जुन ने उपन्यास में गहरी आत्मीयता से व्यक्त किया है।

उपन्यास में विभाकर, इंदिरा, भुवन, चम्पा, निर्मला आदि की कहानी यथार्थवादी शैली में वर्णित की गई है। माने हुए नरकों में से एक कुम्भीपाक भी है जहाँ मरने के बाद मनुष्य जाता है लेकिन विधवा एवं निराश्रित महिलाओं को जीवित भ्रष्ट लोगों ने किस प्रकार कुम्भीपाक में डाल रखा है। उपन्यास का मूल आधार नारी पुरुषों के बीच अनैतिक संबंध है जिसमें सामाजिक संबंधों को भी शर्मसार किया गया है। यहीं नारी खरीदी जाती है उसका व्यवसाय होता है और कहीं वह परिस्थितिवश विवश होकर स्वयं उपभोग की सामग्री बन जाती है उपन्यास की मुख्य पात्र इंदिरा जिसका विवाह पन्द्रह वर्ष की उम्र में होता है लेकिन हवाई दुर्घटना में पायलट पति की मृत्यु हो जाती है उसके बाद इंदिरा की स्थिति वैसी ही दुखद होती है जैसी हमारे समाज में अभागिन विधवाओं की होती है।

“इंदिरा नाम है, उम्र है उन्नीस की। ज़िला मुंगेर की किसी मशहूर बस्ती में पैदा हुई थी, घराना ऊंची नाकवालों का। पन्द्रह की उम्र में शादी हुई। दूल्हा पायलट था, उसी वर्ष हवाई दुर्घटना में जान गवां दी। इंदिरा का फिर वही हाल हुआ, घुटी हुई तबियत के युवकों और आदर्शहीन अंधेड़ों के बीच एक विधवा तरुणी का जो हाल होता है।

गर्भ चार महीने का हुआ। एक अत्याचारी रिश्तेदार डॉक्टरी इलाज के बहाने इंदिरा को आसनसोल ले गया और धर्मशाला में अकेली छोड़कर खिसक आया। तब से दो वर्ष इंदिरा के कैसे कटे हैं यह बात धरती जानती होगी कि आसमान जानता होगा..... हम आप तो अंदाजा भी नहीं लगा सकते भईया।”

देह व्यापार के कुचक्र में फंसी इंदिरा को निर्मला छुड़ाती है और भाई भाभी के बीच भेज देती है। जब ऐसा अवसर आता है तो निर्मला जैसी स्त्रियां कठोर निर्णय लेने से नहीं चूकती।

“एक अनाथ लड़की आपकी शरण में जा रही है मुझे पूरा भरोसा है कि आप और भाभी इस लड़की को अपने परिवार में शामिल कर लेंगे लड़कियों और औरतों की खरीद-विक्री जिनका धंधा था, ऐसे ही एक राक्षस के चंगुल से आपकी छोटी बहन इन्दिरा को छुड़ा लाई है झपट्टा मारकर चील की तरह छीन लाई है....”

ऐसी ही एक पात्र जो ‘मामी’ के नाम से उपन्यास में वर्णित है जो असहाय और निराश्रित जीवन जीने के लिए पूरी तरह आर्थिक रूप से माहिम पर निर्भर है। माहिम जो मामी का खर्चा चलाता है कभी-कभी मामी पर खीजता है। वह नशा करता है और कभी-कभी आर्थिक स्थिति

खराब होने पर मामी पर झुंझलाता है। ये अनैतिक रिश्ते सामाजिक रिश्तों को भी शर्मसार करते हुए दिखाई देते हैं।

“अशंक का मन अंदर ही अंदर कुलबुला उठा, ठीक ही तो कहते हैं लोग..... महिम जैसा पतित पाटलिपुत्र की इस नगरी में दूसरा नहीं। शराब और शराब और शराब..... औरत और औरत और औरत..... यह कौन होगी इसकी? मामी? सचमुच की मामी? न मामी नहीं होगी इतना अपमान मामी तो नहीं बर्दाश्त करेगी”!

मामी जैसी सैकड़ों स्त्रियां जो सामाजिक दंश झेलते हुए निराश्रित जीवन जीने के लिए विवश हैं। वे इस कुम्भीपाक के दलदल से निकलने लिए छटपटा रही हैं, कहीं किसी से सहानुभूति पा जाए तो उनका उद्धार हो जाए। अशंक को मामी इसी भाव से देखती है और स्वतंत्र हो जाना चाहती है।

“परिवार की डाल से चुकी औरतों के प्रति आपकी हमदर्दी मुझे अनूठी लगी। तब आप मुझे भी अपने पात्रों में शामिल कर लीजिए..... कल्पित पात्रों के प्रति जब आपकी सहानुभूति उतनी गहरी थी तो जिन्दा पात्रों की दिक्कतें आपसे भला कैसे देखी जाएंगी? मैंने आपके बारे में महिम जी से काफी सुना है। मैं आपसे फिर मिलना चाहती थी। अभी देखा न ज़रा सी भूल हुई कि गधी-सुअर-उल्लू बना डाला। अब इनके साथ मेरा निभेगा नहीं..... आप कहीं कोई काम दिलवा दीजिए.....”

देह व्यापार के जंजाल में फंसी बुआ जिनका नाम चंपावती है। एक तरफ इस कुम्भीपाक के कुचक्र का संचालन करने में लिप्त हैं दूसरी तरफ इन्दिरा के इस कुचक्र से बाहर निकलने की कहानी सुनकर बुआ द्रवित हो जाती हैं और अन्ततः वे इस निराट ‘सोनागाछी’ के दलदल से निकलने को छटपटाती हैं।

“चम्पा ने ढेर-सी साँस छोड़ी, गर्दन उठाकर देखा। नील निर्मल आकाश और विराट सूनापन, चम्पा को लगा कि यह उसकी ही रिक्तता असीम और नीलाभा बनकर ऊपर छाई हुई है। दिन का वक्त है। ढलता सूरज पश्चिम की तरफ मकान की ओट में चला गया है। तारे नहीं हैं तो नीलिमा और सूनापन दिल पर और भी गहरा असर डालते हैं...कुल मिलाकर कितना अच्छा लगता है...खो गई चम्पा ! गर्दन उसी तरह ऊपर की ओर थी, आंखें उठी हुई !....दिल के अंदर किसी खोह से आवाज़ आई : चली गई, भवन तुमने ठीक ही किया ! मालदार तो मतलब का ही सौदा करता है.... तुमसे तबियत भर जाती तो दूसरी का सौदा करता ! पेट भरा हो और टेंट में काफी रकम हो तो हरी-हरी चरना चाहेगा आदमी....नहीं, तुमने अच्छा किया भुवन ! इस कुम्भीपाक से निकल भगीं, खूब किया!.....”

नागार्जुन ने तत्कालीन आश्रम व्यवथा में व्याप्त भ्रष्टाचार, अनैतिकता, दुर्व्यवहार आदि को उपन्यास वर्णित करते हुए आश्रम व्यवस्था में बदलाव की वकालत करते हैं। “चम्पा फैली हथेलियों को देखती रही। नाखून एक-दूसरे को खरोच रहे थे। संजीदगी में डूबकर कहने लगी, इस ‘आश्रम’ शब्द से मैं बहुत घबराती हूँ। रही होगी इसके पीछे कभी अच्छी भावना, अब तो ये आश्रम अनैतिकता के अड्डे हैं—स्वार्थियों के अखाड़े ! हमारी जैसी मूक असहाय बकरियों की ही नहीं, आप जैसे आदर्शवादी धर्मभीरु बेलों की भी बलि इन आश्रमों के अन्दर चढ़ती आई है। अब वक्त आ गया है कि इन आश्रमों के ढाँचे हम बदल डालें...”

### उपसंहार -

डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर ने स्त्री को दलितों में भी दलित कहकर यह स्पष्ट किया कि यहां सबसे अधिक दलन यदि किसी का हुआ है तो वह स्त्री ही है। कुम्भीपाक उपन्यास भी इसी दलन की कहानी है। अब भी बड़े शहरों में लड़कियों से खुले-आम देह-व्यापार करवाया जाता है। समाचारपत्र में पढ़ने को मिलता है कि छोटी बच्ची से लेकर बूढ़ी औरत तक इस कुम्भीपाक की शिकार हैं। स्त्री सबलीकरण के दौर में आधुनिक स्त्रियां देह-व्यापार के कुचक्र तोड़ने में सबल हुई हैं। जो उपन्यास के अधिकांश पात्रों में देखने को मिलता है।।

### संदर्भ -

1. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,66
2. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,67
3. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,35
4. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,36,37
5. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,92
6. नागार्जुन, कुम्भीपाक, पृष्ठ,130

## समकालीन ग़ज़लों की भाषाई संरचना

यशवंत काछी<sup>1</sup>  
डॉ. वंदना चराटे

### सारांश :-

भारत में ग़ज़ल एक आयातित विधा के रूप में जानी जाती है, इसका सफ़र बहुत लंबा है। इस विधा का मूल अरब में मिलता है। यह विधा अरबी के क़सीदे से निकलकर जब फारसी में आई, तो इसने एक नया कलेवर ग्रहण किया और ग़ज़ल कहलाई। फारसी से यह विधा हिंदी और उर्दू में आई। वर्तमान समय में अनेक भाषाओं में इस विधा पर कलम चलाई जा रही है। वास्तव में 13वीं शताब्दी में मियाँ अमीर खुसरो ने ग़ज़ल के बीज इस धरती की मिट्टी में बो कर भारत में ग़ज़ल के जनक का सम्मान पाया। तब से लेकर आज तक इस विधा की बेल निरंतर फल-फूल रही है। इस बेल को सैकड़ों मालियों ने अपनी कलम की स्याही से सींचा और सरसब्ज़ रखा। आज के दौर में इस बेल में कई रंगों की कलियाँ चटककर अपनी महक गुलशन रूपी साहित्य में फैला रही हैं।

कुंजी शब्द :- ग़ज़ल, ग़ज़लकार, अभिव्यक्ति, संप्रेषण, लिपि, ग़ज़लगोई, विलोपन।

किसी भी प्रकार के साहित्य की सफलता दो बातों पर निर्भर करती है:- पहली अभिव्यक्ति और दूसरी संप्रेषण पर। इन दोनों बातों की सफलता का माध्यम होती है, भाषा और ग़ज़ल की प्रभावशीलता तो उसकी कहन पर ही निर्भर करती है। जिसके लिए ग़ज़लकार के पास एक प्रभावपूर्ण भाषा होना आवश्यक है और ग़ज़ल के बारे में तो कहा भी जाता है ग़ज़ल लिखी या रची नहीं जाती है बल्कि ये तो कही या पढ़ी जाती है। वर्तमान समय में ग़ज़ल में जिस भाषा का प्रयोग किया जा रहा है, वह आमफहम की भाषा है। भाषा की इसी तहज़ीब को गंगा-जमुनी तहज़ीब कहा गया है। ग़ज़ल के नए दौर में उर्दू ग़ज़लों में हिंदी के शब्दों और हिंदी ग़ज़लों में उर्दू के शब्दों का प्रयोग बिना किसी भेदभाव के सरलता से किया जा रहा है। लिपियों के आधार पर ग़ज़लों को भले ही कई खेमों में बाँट दिया गया है, लेकिन कहन के आधार पर ग़ज़ल केवल ग़ज़ल ही होती है। ग़ज़ल की भाषा की पहुँच आम लोगों तक है, इसी कारण हम देखते हैं कि एक बड़ी संख्या में लोग ग़ज़ल से मुतासिर हैं और उन्हीं की भाषा वर्तमान समय में ग़ज़लों की भाषा है।

<sup>1</sup> तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

ग़ज़ल, अदब की एक बेहद ही लोकप्रिय विधा है। इसके माध्यम से शायरों ने प्रेम-सौंदर्य, जामो-मीना, साक्री-शराब, सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक विसंगतियों, मानव-मूल्यों और संस्कृति एवं अपने जीवनानुभवों को अभिव्यक्त किया है। आज भले ही ग़ज़ल ने अपनी लोकप्रियता के कई आयाम गढ़े हों, परंतु कुछ समय पहले तक अदब की इस विधा को बड़ी ही हेय और उपेक्षित दृष्टि से देखा जाता था। इसके बारे में कहा जाता था कि यह तो कोठों की ज़ीनत और महफिलों की रौनक है, इसमें तो केवल महबूब का हाले-दिल बयाँ किया जाता है, इसमें तो फकत साक्री-ओ-शराब की बातें की जाती हैं और यह बात सच भी लगती है। लेकिन यह पूरी तरह से सच नहीं है पुरानी ग़ज़लों में हमें आज भी जीवन के बड़े-बड़े फलसफे मिल जाते हैं। किन्तु एक बात तो निस्संदेह सत्य है कि 18वीं शताब्दी तक ग़ज़लों का दायरा सीमित था। उसकी पहुँच आम जनमानस के तबके तक कम थी। आज ग़ज़लों के क्षेत्र का जो विस्तार हमें दिखाई देता है, उतना विस्तार तत्कालीन समय में नहीं दिखता है। इस बात को गालिब सरीखे नामवर शायर ने भी स्वीकार किया है। वे अपने इस दर्द को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं:-

**“बक़्द-ए-शौक़ नहीं, ज़फ़-ए- तंगना-ए-ग़ज़ल  
कुछ और चाहिए वुसअत, मिरे बयाँ के लिये।”<sup>1</sup>**

आज ग़ज़ल का ओहदा और दायरा बहुत अधिक समृद्ध और विस्तृत है। आज एक बड़ी संख्या में ग़ज़लकार अपने कलाम लिख रहे हैं। लेकिन ग़ज़ल का अर्थ मात्र चार-पाँच शेरों की कोई तुकबंदी नहीं है। ग़ज़ल का अर्थ तो शायर का चिंतन है, जो शायरी के व्याकरणिक ढाँचे में बँधा होता है। एक ग़ज़ल में ही ग़ज़लकार के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण दिख जाते हैं और हमें यह पता लग जाता है कि शोअरा कितना क़ाबिल फ़नकार है। ग़ज़ल का इतिहास बहुत लंबा और पुराना है। इस परंपरा में न जाने कितने उस्ताद फ़नकार हुए। कुछ समय के थपेड़ों से मिट गए, कुछ की धुंधली-सी तस्वीर अब भी दिखाई देती है और कुछ लोगों के मन-मस्तिष्क पर अपनी अमिट छाप छोड़ गए हैं। किसी भी कलमकार की प्रसिद्धि के दो सबसे बड़े कारण होते हैं, जिनमें से एक उसके विचारों की संप्रेषणीयता और दूसरा है भाषा। भाषा, तो संप्रेषण का माध्यम ही है। जिन फ़नकारों की भाषा सरल, सहज और बोधगम्य रही, जिन्होंने भारी-भारी शब्दों का चमत्कार कम दिखलाया और आमों-खास की भाषा का प्रयोग किया। आज वही फ़नकार लोगों के दिलो-दिमाग़ और जुबान पर ज़िंदा हैं।

वली, मीर, मोमिन, जौक़, अकबर, इक़बाल, फ़ैज़ अहमद फ़ैज़, कैफ़ी आज़मी, साहिर लुधियानवी, निदा फ़ाज़ली, बशीर बद्र, गोपाल दास नीरज, दुष्यंत कुमार आदि सभी शायर अपनी सरल भाषा में कहे गए शेरों के कारण जाने जाते हैं, न की भारी-भरकम आम-आदमी की समझ से परे फ़ारसीनिष्ठ और संस्कृतनिष्ठ शब्दों के प्रयोग के कारण। ग़ज़लों की भाषा आम जनमानस की भाषा है और जिस भी ग़ज़लकार ने इस भाषा का प्रयोग किया है। वह क़ामयाबी की बुलंदियों पर

क्रायम हुआ। हिंदुस्तान में ग़ज़लों की भाषा हिंदुस्तानी रही है। जिसमें उर्दू और हिंदी दोनों का मिश्रण है। जितने भी ग़ज़ल कहने वाले ग़ज़लकार हैं, उन्हें यह बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि अच्छी ग़ज़ल सिर्फ़ आमफहम की भाषा में ही कही जा सकती है और हिंदुस्तान की गंगा-जमुनी तहज़ीब वाली भाषा ही वह भाषा है--- न कि केवल संस्कृत, अरबी, फ़ारसी वाले वाक्य। “ग़ज़ल की भाषा वह काव्य-भाषा है, जो दो संप्रदायों को जोड़ने वाली है, वह न हिंदू है, न मुसलमान। ग़ज़ल काव्य की वह ज़मीन है, जहाँ हिंदी उर्दू हो जाती है और उर्दू हिंदी। यही वह जगह है जब ग़ज़ल को हिंदी ग़ज़ल या उर्दू ग़ज़ल कहना गुनाह करने की तरह हो जाता है। भाषा के इस ज्ञान के बिना ग़ज़लगोई मुश्किल है।”<sup>2</sup>

भाषा के आधार पर ग़ज़ल को भाषाई खेमों में बाँट देना कहाँ तक उचित है? विचारों के माध्यम से ग़ज़ल कहीं जाती है और विचारों में भाषा का बंधन कहाँ होता है। अपनी बात को आम-आदमी तक पहुँचाने के लिए उन्हीं की भाषा और लहज़े में बात कहनी पड़ती है। आज ग़ज़ल को उर्दू और हिंदी दो भाषाओं में बाँटा जा रहा है, लेकिन जब यह दोनों भाषाएँ लोगों के बीच आती हैं, तो इनमें लिपि को छोड़कर कोई और अंतर नहीं रह जाता है। “जैसे दो इंसानों के चेहरे एक से नहीं होते लेकिन नस्ल से दोनों इंसान होते हैं, ठीक वैसे ही एक भाषा के इन दो भाषाओं के चेहरे, यानी लिपियाँ भिन्न हैं लेकिन दोनों की वाक्य-रचना, व्याकरण और बोलचाल के मुहावरे एक-से ही हैं।”<sup>3</sup>

अगर हम ग़ज़लों के उद्भव और विकास की बात करें, तो हम पाते हैं कि प्रत्येक काल में ग़ज़लों की भाषा में परिवर्तन हुए हैं और जबसे यह विधा भारत की सरज़मीं पर आई, तबसे इस विधा में अभिव्यक्त विचारों की भाषा बोलचाल की भाषा ही रही है। यदि हम उर्दू और हिंदी दोनों भाषाओं को देखें तो हम पाते हैं दोनों एक साथ जन्मी, पली-बढ़ी और ग़ज़ल के क्षेत्र में उतरीं जहाँ पर यह ज़मीन से जुड़ीं। हमारे यहाँ ग़ज़लों की एक अलग भाषाई परंपरा रही है। “ज़िगर या फ़िराक और शमशेर या दुष्यंत की भाषा हमारी परंपरा है। हमें अपने परिवेश के बीच की भाषा को गढ़ना है।”<sup>4</sup>

हर भाषा की अपनी एक सीमा होती है, जिसमें उसके शब्द बँधे होते हैं। भाषा तो हमेशा से परिवर्तनशील रही है और जो भाषा परिवर्तनशील नहीं होती है, वह धीरे-धीरे समय के बहाव में बह जाती है। किसी भाषा की उन्नति केवल उस भाषा के शब्दों के द्वारा ही संभव नहीं होती है। समय की माँग के अनुरूप उसे अन्य भाषाओं के शब्द स्वयं में समाहित करने पड़ते हैं और इसी से भाषा की वृद्धि होती है। भाषा की शाब्दिक बढ़ोत्तरी हेतु अन्य भाषाओं के शब्दों का अधिग्रहण अच्छी बात है, परंतु जब किसी भाषा में पर्याप्त शब्द हों तो उनके अनुप्रयोग में भी कोई दुविधा नहीं होना चाहिए। “सूर्य पूर्व दिशा से निकलता है।” के स्थान पर “सन ईस्ट से निकलता है” की कोई आवश्यकता नहीं है। ऐसा करके हम अपनी भाषा की उन्नति नहीं बल्कि अवनति करने पर तुले हुए हैं। वर्तमान में हम एक गंभीर संकट से जूझ रहे हैं, वर्षों से साहित्य में प्रयुक्त संस्कृतनिष्ठ शब्दों के सरलीकरण के नाम पर इन शब्दों के विलोपन के संकट से। किसी भी भाषा से उसके मूल शब्दों का

विलोपित होना, उस भाषा के लिए शुभ संकेत नहीं है और यह संकट हिन्दी भाषा पर गंभीर रूप से छाया हुआ है। जहाँ एक ओर अंग्रेजी और अन्य भाषाओं में कठिनता होने के बावजूद भी उनके शब्दों को सीखने के लिए शब्दकोशों की सहायता लेकर शब्दों को सीखा जा रहा है, वहीं दूसरी तरफ हिन्दी भाषा जो हमारी राजभाषा भी है, के संस्कृतनिष्ठ शब्दों को कठिन बताकर इन शब्दों के विलोपन का कार्य किया जा रहा है। इन शब्दों की समुचित जानकारी प्राप्त कर लेने पर यह भी सरल लगने लगेंगे। अतः इन शब्दों का विलोपीकरण करने के स्थान पर इन शब्दों से मित्रता की जाए और इनको भी उपयुक्त भावों में अभिव्यक्त किया जाए। शायरी में व्यक्त भावों के लिए भावों के अनुरूप शब्द चुने जाते हैं। यदि किसी को राम और सीता के दांपत्य जीवन के बारे में शायरी में कहना है, तो उसे दोनों के दांपत्य प्रेम को दर्शाने के लिए 'स्नेह या प्रेम' शब्द का ही प्रयोग करना पड़ेगा। वहाँ 'इश्क़' शब्द का प्रयोग अनुचित होगा।

“अपने भाषागत संस्कारों की सीमाओं के कारण ही हम अन्य भाषाओं के शब्दों और भावों को अपनी भाषा में ठीक वैसा ही व्यक्त कर पाने में असमर्थ होते हैं। इस कारण भाषाएँ अन्य भाषाओं के शब्दों को ज्यों का त्यों अपने में समो लेती हैं। यही दृष्टिकोण किसी भाषा के विकास में सहायक होता है। जैसे फ़ारसी शब्द 'राम' के लिए हिंदी में कोई शब्द नहीं है और यह शब्द हिंदी में अपने सटीक अर्थ में रच-बस गया है, तो इसके लिए कोई शब्द क्यों गढ़ा जाए? इसी प्रकार हिंदी में अनेक शब्दों- धर्म, नयन, भक्त, संस्कार, आरती आदि के लिए उर्दू, फ़ारसी, अंग्रेजी ही क्या संसार की किसी भाषा में शब्द नहीं हैं।”<sup>5</sup> प्रत्येक शब्द की अपनी एक अलग ही दुनिया होती है। ग़ज़ल में इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग किया जा रहा है, जो मिले-जुले भाषाई शब्दों में प्रचलित हैं। वर्तमान समय में तो ग़ज़लों को कई भाषाओं में लिखा जा रहा है। लेकिन जिस भाषा का प्रचलन लोक-संसार में होता है, भाषा के उन्हीं शब्दों के माध्यम से ग़ज़लों में भावाभिव्यक्ति होती है।

जो भी ग़ज़लकार इस विधा के नवाजिशे-क्रम से मक़बूल शख्सियत के तौर पर क़ायम हुए हैं। उन सभी ग़ज़लगोओं ने ऐसी भाषा में ग़ज़लें कही हैं, जो न उर्दू और न हिंदी हैं, ऐसी भाषा को ख़ालिस उर्दू कहा जाता है। जो की उर्दूदाँ भी आसानी से समझ लेता है और हिंदीदाँ भी। ग़ज़लों की भाषा के बारे में अपने भाव व्यक्त करते हुए ग़ज़ल-सम्राट दुष्यंत कुमार कहते हैं, कि:- “उर्दू और हिंदी अपने-अपने सिंहासन से उतरकर जब आम-आदमी के पास आती हैं, तो उनमें फ़र्क़ करना बड़ा मुश्किल होता है। मेरी नीयत और कोशिश यह रही है कि इन दोनों भाषाओं को ज़्यादा से ज़्यादा करीब ला सकूँ। इसलिए ये ग़ज़लें उस भाषा में कही गई हैं, जिसे मैं बोलता हूँ।”<sup>6</sup> इस संदर्भ में अपनी ग़ज़ल के माध्यम से वह कहते भी हैं:-

“मैं जिसे ओढ़ता बिछाता हूँ  
वो ग़ज़ल आपको सुनाता हूँ।”<sup>7</sup>

उर्दू के कई शायर हिंदी के संस्कृतनिष्ठ शब्दों का बहुत ही शानदार तरीके से प्रयोग करते हैं। भले ही वह संस्कृतनिष्ठ हिंदी से भलीभाँति परिचित नहीं होते हैं। उसी तरह हिंदी के कई शायर उर्दू नहीं जानते हुए भी उर्दू शब्दों का इस्तेमाल बड़ी ही समझदारी से कर लेते हैं। इसका कारण यही है

की ग़ज़ल ने उस भाषा को अपनाया है, जिसे हिंदुस्तानी बोलचाल की भाषा कहते हैं। जहाँ उर्दू वाले हिंदी और हिंदी वाले उर्दू शब्दों का दिल खोलकर प्रयोग करते हैं। ग़ज़लों में भाषा का प्रचलित, स्वाभाविक और सर्वव्यवहृत स्वरूप ही लिया जाता है।

“बशीर साहब ने अपने एक इंटरव्यू में कहा था कि:- जो शब्द हमारी ज़िंदगी में घुल-मिल जाते हैं, ग़ज़ल की भाषा उन्हीं से बनती है। शब्दों की भाषिक व्युत्पत्ति महत्वपूर्ण नहीं है। अपने युग और समकालीन जीवन का चित्र अंकित कर सकने वाले और हमारे जीवन की दैनंदिन समस्याओं और कशमकश की काव्यमय प्रस्तुति कर सकने वाले शब्द ही ग़ज़ल की असली भाषा हैं। उन्हें वह ग़ज़ल ज़्यादा भरपूर लगती है, जिसकी भाषा सुनने में हिंदी और उर्दू के फ़र्क को खत्म करती है।”<sup>8</sup> वर्तमान समय में हिंदी-उर्दू के साथ दैनंदिन जीवन में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी होने लगा है। एक अनपढ़ व्यक्ति भी कई अरबी, फ़ारसी और अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग बड़े धड़ल्ले से कर रहा है। ग़ज़लों में प्रयुक्त शब्द तो विचारों की अभिव्यक्ति के ऊपर निर्भर करते हैं। वह उपयुक्तता की दृष्टि और वातावरण की सृष्टि की अनिवार्यता लेकर ग़ज़ल में ढल जाते हैं। यह शब्द ठीक उसी प्रकार अपनी स्वाभाविता से ग़ज़लों में आ जाते हैं, जैसे बहती हुई नदी की धार में कोई फूल चला आता है। इन्हीं अलग-अलग भाषिक फूलों से ग़ज़ल की भाषा का ग़ज़रा गूँथा जाता है। बानगी के तौर पर बशीर साहब का यह शेर देखिए:-

“दुनिया भर के शहरों का कल्चर यकसाँ  
आबादी तन्हाई बनती जाती है।”<sup>9</sup>

### निष्कर्ष:-

ग़ज़ल ने लगभग एक हजार साल का सफर तय कर लिया है। ग़ज़ल की इस लंबी यात्रा में इसकी कहन तथा लेखन में बहुत सा अंतर भी साफ दिखाई देता है। हर दौर में ग़ज़ल की कहनात उस युग के अनुरूप प्रचलित भाषा के अनुसार ही दिखाई देती है। हमें ग़ज़लों में बहुत सा भाषिक बदलाव देखने को मिलता है। भारत में ग़ज़लों के आरंभिक समय से वर्तमान समय तक भाषा का परिवर्तन अरबी, फ़ारसी, हिंदी, उर्दू कई रूपों में हुआ है। वर्तमान में देश में जिस प्रकार की भाषाओं का चलन है। उसी भाषा में भरपूर ग़ज़लें कही जा रही हैं। अब तो क्षेत्रीय बोलियों में भी ग़ज़लें कही जा रही हैं। इसके इतर अन्य भारतीय भाषाओं में भी बड़ी अच्छी और शीरी ग़ज़लें कही और सुनी जा रही हैं। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि समकालीन ग़ज़लों का भाषिक क्षेत्र अत्यंत ही व्यापक एवं समृद्ध है। जिसकी पहुँच आमफहम के जीवन तक भी है।

### सहायक ग्रंथ सूची:-

1. दीवान-ए-ग़ालिब, संपादक- अली सरदार जाफरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2021, पृ. क्र. 388.

2. ग़ज़ल... दुष्यंत के बाद, संपादक- दीक्षित दनकौरी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2014, पृ. क्र. Xxvi.
3. ग़ज़ल सप्तक, संपादक- गोपालकृष्ण कौल, सामयिक प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 2023, पृ. क्र. 9.
4. ग़ज़ल... दुष्यंत के बाद, संपादक- दीक्षित दनकौरी, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2014, पृ. क्र. Xxix.
5. वही, पृ. क्र. Xxxiv.
6. साये में धूप, दुष्यंत कुमार, राधाकृष्ण प्रकाशन, जगतपुरी, दिल्ली, 2022, पृ. क्र. Vii.
7. वही, पृ. क्र. 62.
8. कल्चर यक्साँ समग्र, बशीर बद्र, संपादक- बसंत प्रताप सिंह, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2023, पृ. क्र. 20.
9. वही, पृ. क्र. 424.

## “डॉ. जयप्रकाश कर्दम के उपन्यास ‘उत्कोच’ के नायक ‘मनोहर’ के आदर्शवादी व्यक्तित्व का मूल्यांकन”

सुमीर ठाकरे<sup>1</sup>

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन

### शोध सारांश -

डॉ. जयप्रकाश कर्दम का हिन्दी भाषा के साहित्यकारों में दलित चेतना के संदर्भ में विशिष्ट स्थान है। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, बाल-साहित्य एवं अनुदित रचनाओं के लेखन में अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज करायी है। उन्हें साहित्य के प्रति विशेष अनुराग है। उन्होंने अपने एक साक्षात्कार में व्यक्त किया था कि ‘साहित्य मुझे जिंदा रखने में मददगार है।’ जयप्रकाश जी के प्रसिद्ध उपन्यास ‘करुणा’, ‘छप्पर’, ‘उत्कोच’ है। प्रस्तुत शोध पत्र में जयप्रकाश जी द्वारा रचित ‘उत्कोच’ उपन्यास के नायक ‘मनोहर’ के व्यक्तित्व का मूल्यांकन आदर्शवादी व्यक्तित्व के परिप्रेक्ष्य में किया है। इस आकलन में उपन्यास में चित्रित आदर्शवादी, भ्रष्टाचार विरोधी, ईमानदारी आदि मूल्यों का शोधपरक दृष्टि से विचार किया गया है।

**कुंजी शब्द** - डॉ.जयप्रकाश कर्दम, हिन्दी भाषा, साहित्यकार, दलित चेतना, उत्कोच, उपन्यास, कविता, कहानी, बाल-साहित्य।

डॉ. जयप्रकाश कर्दम का व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न है। उनका व्यक्तित्व बहुआयामी एवं सर्जनशील रहा है। दलितों के प्रति उनका दृष्टिकोण पारम्परिक रूप से हटकर यथार्थवादी रहा है, वे उनकी मानसिकताओं का सूक्ष्म चित्रण करते हैं। किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व को जानने और समझने के लिये हमें उस व्यक्ति के व्यक्तित्व के बाह्य एवं आंतरिक व्यक्तित्व को जानना, समझना आवश्यक होता है। “किसी भी साहित्यकार या व्यक्ति की पहचान हम उसके बाह्य अंग से कर सकते हैं, पर कभी-कभी जो जैसा दिखता है वह वैसा होता नहीं है। बाह्य व्यक्तित्व में हम किसी भी व्यक्ति के शरीर, रंग-रूप, रहन-सहन, खान-पान

<sup>1</sup> शोधार्थी, सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.)

शोध निर्देशक, सह-प्राध्यापक(हिन्दी), सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.)

आदि देख सकते हैं। ठीक उसी प्रकार डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी भी सुदृढ़ शरीर से सम्पन्न, गौरवर्णीय, ऊँचे कद के धनी हैं। उनका बाह्य व्यक्तित्व प्रभावशाली रहा है। वे मृदुभाषी, मितभाषी होने के साथ-साथ शांत स्वभाव के धनी हैं। उन्हें सादा रहन-सहन पसंद है। वे अपने एक साक्षात्कार 'नेशनल दस्तक' में कहते हैं कि 12 घण्टे नौकरी करने के बाद आदमी का किसी भी चीज में मन नहीं लगता, क्योंकि वह सुबह से इधर की फाईल उधर करके थक जाता है। पर कर्दम जी को इन बातों से परहेज है। उन्होंने अपनी साहित्य साधना की रुचि नहीं छोड़ी है। वे नित नये साहित्य सृजन करते रहते हैं वे कहते हैं 'आदमी चाहे तो हर काम सम्पन्न कर सकता है, अगर उसके पास अच्छी लगन हो।'<sup>1</sup>

किसी भी साहित्यकार या व्यक्ति को हम बाहर से देखकर उसका बाह्य रूप जान-समझ सकते हैं मगर उसे आंतरिक रूप से जानना है तो उसके नजदीक जाना होता है, तभी उसके विचार, आंतरिक भाव हमारी समझ में आते हैं। कर्दम जी का साहित्य का पठन कर उनके आंतरिक व्यक्तित्व को जाना-समझा जा सकता है। कर्दम जी में चिंतन-मनन की प्रवृत्ति अत्यधिक है। वे कहते हैं कि "मैं मानता हूँ कि प्रकृति द्वारा प्रदत्त हमारा जीवन जीने के लिये है। सबको समान रूप से जीने का अधिकार और अवसर होना चाहिये। जीवन के प्रति मेरा दृष्टिकोण सदैव सकारात्मक रहा है। विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य बनाए रखकर हमें आगे बढ़ने के लिये हमेशा प्रयत्नशील रहना चाहिये। जीवन में सफलता के लिये परिश्रम आत्मविश्वास तथा अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठा और ईमानदारी का होना आवश्यक है। संघर्ष और आपदाएँ हमें मजबूती प्रदान करती हैं। हमें ताकत देती हैं।"<sup>2</sup> कर्दम जी का ये कथन उनके व्यक्तित्व के आदर्शवादी आयाम को अभिव्यक्त करते हैं। यह भी माना गया है कि रचनाकार के व्यक्तित्व का बिम्ब उसकी रचना में अवश्य झलकता है। 'उत्कोच' उपन्यास का नायक 'मनोहर' भी इन्हीं गुणों से ओप्रात है।

● **उद्देश्य :-** प्रस्तुत शोध हेतु निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये :-

1. श्री जयप्रकाश कर्दम द्वारा रचित उपन्यास 'उत्कोच' का संक्षिप्त परिचय प्रदान करना।
2. 'उत्कोच' उपन्यास के नायक 'मनोहर' के आदर्शवादी व्यक्तित्व संदर्भित उद्धरण प्रस्तुत करना।
3. ईमानदार, परिवार के प्रति समर्पित, परिश्रमी, नौकरी के प्रति निष्ठावान, भ्रष्टाचार विरोधी आदि मूल्यों का आकलन आदर्शवादी व्यक्तित्व के संदर्भ में करना।
4. 'उत्कोच' उपन्यास के नायक 'मनोहर' के आदर्शवादी व्यक्तित्व के मूल्यांकन संदर्भित निष्कर्ष प्रदान करना।

- **परिकल्पना :-** प्रस्तुत शोध हेतु निम्नांकित परिकल्पना निर्मित की गई:-
- 1) श्री जयप्रकाश कर्दम द्वारा रचित उपन्यास 'उत्कोच' के नायक 'मनोहर' का व्यक्तित्व उपन्यास में चित्रित उसके चरित्र चित्रण व उद्धरणों के आकलन द्वारा आदर्शवादी पाया जायेगा।
- **शोध प्रविधि :-** प्रस्तुत शोध-पत्र में वर्णनात्मक एवं समीक्षात्मक शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है।
- **'उत्कोच' उपन्यास का परिचय :-**

डॉ. जयप्रकाश कर्दम जी का यह तीसरा प्रकाशित उपन्यास है। यह सन् 2019 में राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित हुआ था। इसमें कुल बारह इकाईयाँ हैं, उनमें इस उपन्यास का कथानक सिमटा हुआ है। इस उपन्यास के प्रभाव पात्रों का विवरण इस प्रकार है:-

- 1) मनोहर - नायक
- 2) श्यामा - नायिका (मनोहर की पत्नी)
- 3) गौण पात्र - सुजाता (मनोहर की माँ), कपिल (मनोहर का भाई), आनन्द (श्यामा का भाई), मनोहर की बेटी, मनोहर के सहकर्मी।

इस उपन्यास की भूमिका में कर्दम जी ने लिखा है - "यदि भ्रष्टाचार पर अंकुश नहीं लगेगा तो यह इतना विकराल रूप ले लेगा कि आपके बच्चों को नौकरी नहीं मिल पायेगी। आप जैसे लोग भी अपने बच्चों के लिये नौकरी नहीं खरीद सकेंगे।" उपन्यास का प्रमुख विषय (रिश्वत) भ्रष्टाचार का मुद्दा है। भारत के सामान्य जीवन जीने वाले व्यक्ति रोजमर्रा की जिंदगी में थोड़े बहुत पैसों की रिश्वत देकर जो काम निकालवाता है, उनकी कामचलाऊ जिंदगी पर यह उपन्यास आधारित है और 'भ्रष्टाचार' पर इसने अपना ध्यान केन्द्रित किया है। कर्दम जी ने अनेक घटनाक्रमों के माध्यम से रिश्वत और भ्रष्टाचार को उपन्यास में उजागर किया है।

इस उपन्यास में दलित जाति का भी चित्रण किया है कि कैसे कोई दलित जाति का कर्मचारी अपना काम ईमानदारी से करता है पर भ्रष्टाचार आधारित व्यवस्था उसे ईमानदारी से काम करने नहीं देती है। लेखक ने इस उपन्यास में नारी के स्वाभाव को अभिव्यक्त करने में भी अपनी अभिव्यक्ति की है। नायक 'मनोहर' की पत्नी श्यामा पार्टी में सबसे हल्के कपड़े पहनकर जाती है तब उसे अपने पति से भी कम तनख्वाह वाले कर्मचारी की पत्नी की भी साड़ी उससे अच्छी दिखाई देती है। तब उसे बहुत गुस्सा आता है। मनोहर के आदर्शवादी विचारधारा का ही यह एक रूप है।

उपन्यास की भाषा प्रभावशाली सरल-सहज व कथानक-परिवेष के संदर्भ में उपयुक्त है, जो समाज में उपस्थित हर पहलू पर प्रहार करती अनुभव होती है। सभी पात्रों का चरित्र चित्रण कथानक के अनुरूप है।

● **‘उत्कोच’ उपन्यास के नायक ‘मोहन’ का व्यक्तित्व :-**

इस उपन्यास का प्रमुख पात्र नायक ‘मनोहर’ को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में उपन्यासकार ने प्रस्तुत किया है, जो किसी भी रूप में रिश्वत और भ्रष्टाचार का समर्थन नहीं करता। वह बेहद ईमानदार है और इसी ईमानदारी के कारण उसकी तरक्की नहीं हो पाती है। ‘मनोहर’ पिछड़ी जाति का होकर विक्रय कर विभाग में क्लर्क पद पर रहते हुए कई बार ऑफिसर पद की परीक्षा तो पास कर लेता है पर हर बार साक्षात्कार में कम अंकों के कारण उसे ‘क्वालिफाय’ नहीं किया जाता है। यहाँ पर लेखक ने रिश्वत की ओर संकेत किया है। कर्दम जी ने उपन्यास में बताया है कि ‘मनोहर’ किसी भी रूप में चाहे वह रोजमर्रा के बिल पास करने, फाईल आगे बढ़ाने या खुद की तरक्की का मामला हो, रिश्वत, भ्रष्टाचार, बेईमानी का कतई न समर्थन करता है न स्वयं करता है। इसके बावजूद बदले की भावना से प्रेरित होकर उसे एक-दो बार अपने ही ऑफिस में रिश्वत लेने के झूठे केस में फंसा दिया जाता है, पर हर बार वो निर्दोष साबित होता है, यही घटनाचक्र उसके आदर्शवादी व्यक्तित्व के परिचायक है। अपनी आदर्शवादिता के कारण उसे अपने सवर्ण सहकर्मियों की उपेक्षा, उपहास और उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। इसके अलावा घर में भी उसकी पत्नी उसकी इसी आदर्शवादिता के कारण नाराज रहती है और तनाव के कारण बीमार पड़ जाती है, मनोहर ठीक से उसका इलाज भी नहीं करा पाता है, तब वह अपने भाई आनन्द के साथ चली जाती है और अन्त में बीमारी के कारण, तनाव के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है।

● **‘उत्कोच’ उपन्यास के कथन के उद्घरणों के माध्यम से नायक ‘मनोहर’ के आदर्शवादी व्यक्तित्व का आकलन :-**

‘उत्कोच’ का आरम्भ ही मार्मिक है जहाँ मनोहर पिछड़ी जात का क्लर्क है, विक्रय विभाग में पदोन्नति हेतु विभाग की कई बार लिखित परीक्षा उत्तीर्ण कर लेता है, पर रिश्वत न देने के कारण उसे साक्षात्कार में कम अंक मिलते हैं और उसे पदोन्नति हेतु अयोग्य करार घोषित किया जाता है। कारण यही था कि उसके पास रिश्वत तंत्र में फिट होने के लिये मोटी रकम नहीं थी, इसके अलावा वह सदैव अपने सिद्धांतों, नैतिक मूल्यों एवं भ्रष्टाचार विरोधी स्वैमे तथा अपनी आदर्शवादिता पर अडिग रहता है। इसी वजह से वह अपने कार्यालय के सभी कर्मचारियों का अप्रिय पात्र है। उपन्यास में मनोहर कहता है “साक्षात्कार में निकल नहीं पाया। हालांकि हर बार मेरा साक्षात्कार अच्छा हुआ, लेकिन हर बार मुझे साक्षात्कार में कम नम्बर मिले और मैं ऑफिसर बनने में सफल नहीं हो सका। लिखित परीक्षा में मुझसे कम

अंक पाने वाले लोग साक्षात्कार में अधिक अंक पाकर सफल हो गये। जबकि उनका साक्षात्कार भी मुझसे अच्छा नहीं हुआ था। “4 इस तरह कर्दम जी ने भ्रष्टाचार को दर्शा कर मनोहर के ईमानदारी के मूल्य को अभिव्यक्त कर उसके आदर्शवादी चरित्र का चित्रण किया है।

उपन्यास के कथानक में एक स्थान पर घटनाक्रम में वर्णित है कि एक दो बार अपने ही कार्यालय में रिश्वत लेने के झूठे केस में मनोहर को उसके सहयोगियों एवं अधिकारियों ने मिली-भगत कर फंसा दिया था पर वो जाँच के दौरान निर्दोष पाया जाता था। “जांच अधिकारी को इस बात का विश्वास था कि मनोहर रिश्वत मांग नहीं सकता है इसलिए शिकायत को पढ़ते ही उसके मस्तिष्क में पहली प्रतिक्रिया यही हुई। रिश्वत मांगने की शिकायत और वह भी मनोहर के खिलाफ ? एकदम फर्जी है। इसके पीछे जरूर कोई बात होगी। उसे शिकायकर्ता की मानसिकता पर तरस भी आया और अफसोस कि उसने मनोहर जैसे ईमानदार व्यक्ति के खिलाफ झूठी शिकायत क्यों की? वह जानता था कि इस शिकायत में कोई दम नहीं है। “5 इन दोनों उद्धरणों के माध्यम से हम कह सकते हैं कि मनोहर का व्यक्तित्व आदर्शवादी है क्योंकि ईमानदारी, नैतिकता उसमें कूट-कूट कर भरी है।

#### ● पारिवारिक रिश्तों के प्रति समर्पित भावना -

मनोहर अपनी पत्नी के प्रति रिश्ते निर्वाह करने में भी ईमानदार बताया गया है। “पत्नी श्यामा की बीमारी पर जब बहुत खर्च हो रहा था तब एक दिन मनोहर को दुःखी और परेषान देखकर श्यामा ने उससे कहा - “मैं देख रही हूँ, तुम बहुत परेषान हो। इतना पैसा भी खर्च कर रहे हो, इतने परेषान मत हो।” मनोहर ने उसे सांत्वना देते हुए कहा - “कितना पैसा खर्च हो रहा है, इसकी चिंता तुम मत करो। तुम बस जल्दी से ठीक हो जाओ। ‘पता नहीं कहाँ-कहाँ से इंतजाम कर रहे हो तुम?’ श्यामा ने अपनी चिंता दोहरायी। ‘सब कुछ हो जायेगा, श्यामा, मैं सब कर लूंगा। तुम इसकी चिंता बिल्कुल भी मत करो।’ मनोहर ने श्यामा को इस ओर से चिंतामुक्त रखने की कौषिष करते हुए कहा “कहाँ से कर लोगे तुम ? कोई जमा-पूजी तो है नहीं तुम्हारे पास। किसी न किसी से कर्ज लोगे। इतना कर्ज में डूब जाओगे तो कहाँ से चुकाओगे?’ इस बार श्यामा के शब्दों में चिंता से अधिक उलाहना सा था। फिर जीपीएफ की धनराशि जल्दी निकालवाने के लिये कहती है - ‘काम जल्दी करवाने के लिये रिश्वत देनी पड़ती है। बिना कुछ लिये वे भी कहाँ फाइल आगे बढ़ाते हैं और तुम रिश्वत दोगे नहीं?’ श्यामा का स्वर व्यंग्यात्मक था। “6

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि मनोहर अपनी पत्नी के प्रति समर्पित, निष्ठावान व उसके स्वास्थ्य के प्रति चिंतित था, इलाज के पैसों के लिये प्रयत्नशील था, जिसे उसकी पत्नी स्वयं महसूस भी करती थी मगर वह अपनी ईमानदारी पर इतना अडिग था कि पत्नी के बीमा होने पर भी वह

रिश्वत देकर जीपीएफ के लोन हेतु फाइल भुगतान हेतु आगे नहीं बढ़वाना चाहता था। श्यामा के उपालम्भों, उलाहनों और व्यंग्य के बावजूद वह श्यामा को उसके भाई के साथ जाने से नहीं रोक पाता है, क्योंकि भाई के यहाँ इलाज अच्छा होगा और धन भी नहीं लगेगा, खर्चा भाई का होने वाला था और कम भी क्योंकि सरकारी अस्पताल में इलाज होना था।

#### ● पुत्री के प्रति कर्तव्यों का निर्वाह -

पत्नी 'श्यामा' की मृत्यु के बाद जब सारे परिवार वाले मनोहर की दूसरी शादी के लिये दबाव बनाते हैं तो वह अपनी मृत पत्नी के प्रति भी ईमानदारी निबाहते हुए आदर्शों पर कायम रहकर अपनी बेटी 'सुजाता' को विमाता के दुःख को न देखना पड़े, दूसरे विवाह से इन्कार कर देता है, यहाँ इस उद्धरण से सिद्ध होता है कि मनोहर का व्यक्तित्व आदर्शवादी है और वो अपने रिश्तों के प्रति ईमानदार और वफादार है। बेटी के सुख के आगे वह अपनी खुशियों को नजरअंदाज कर देता है।

#### ● कार्य के प्रति लगन व निष्ठा -

पत्नी 'श्यामा' की मृत्यु के दौरान जब वह अपने कार्यालय से अवकाश मांगता है तो बड़े बाबू कमिश्नर के आने की बात कहकर उसे छुट्टी नहीं देते हैं बल्कि और ज्यादा काम दे देते हैं - "पूरे दफ्तर में सबको मनोहर की पत्नी की मृत्यु का पता था। उसके दफ्तर पहुँचने पर सबने उसके प्रति संवेदनाएँ व्यक्त की थीं। ऐसे में एस.डी.ओ. साहब को यह पता नहीं हो, ऐसा नहीं हो सकता था, किन्तु मनोहर के प्रति शोक संवेदना का कोई शब्द कहे बिना, उसने जिस अपेक्षापूर्ण लहजे में बात कर उसे छुट्टी देने से इंकार किया था, उससे मनोहर ने स्पष्ट रूप से समझ लिया था कि एस.डी.ओ. के अंदर मनुष्यता नाम की चीज नहीं है। वह मानवीय संवेदनाओं से शून्य है।" 7 इस अपेक्षापूर्ण अमानवीय व्यवहार के बावजूद वह बड़े बाबू के आदेशानुसार सारे पेंडिंग काम निपटाकर रोजमर्रा के काम भी पूरे कर देता है और मन ही मन निःशब्द इस असहनीय दुःखद पत्नी की मृत्यु की पीड़ा को सहकर, अपमान सहकर अपने कार्य को पूरी निष्ठा व लगन से सम्पन्न करता है। यहाँ भी मनोहर के व्यक्तित्व के चित्रण में आकलन करने पर कार्य के प्रति समर्पित मेहनती व निष्ठावान आदर्शवादी युवक के दर्शन होते हैं।

#### ● अधिकारियों की दृष्टि में मनोहर के व्यक्तित्व का मूल्यांकन -

मनोहर पर लगाये गये अभियोग की जांच के पश्चात जांच अधिकारी ने मनोहर को बुलाकर कहा - " 'मनोहर' मैं जानता हूँ कि तुम एक ईमानदार और नेक इंसान हो, और हमेशा नियमानुसार ही काम करते हो। हमारे विभाग में तो क्या, दुनिया में तुम्हारे जैसे लोग बहुत कम हैं, जिनकी मूल्यों में आस्था है और जिनके अंदर मानवीय मूल्य इतने गहरे तक बैठे हैं। तुम एक मिसाल हो। तुम्हारे खिलाफ इस तरह शिकायतों से मुझे दुःख है। मेरा विश्वास है कि

तुम इस तरह की शिकायतों से विचलित नहीं होंगे। मनोहर कहता है - जी ! शुक्रिया सर ! मुझे पर आपका यह विश्वास मेरे लिये बड़ी बात है, मैं आपके विश्वास को बनाये रखने की पूरी कौशिल्य करूँगा सर। “अफसर मनोहर का मनोबल बढ़ाते हुए बोला - ‘शाबास जाओ। निर्भय होकर काम करो।’”<sup>8</sup>

इन उद्धरणों से पूर्णतया स्पष्ट आकलित होता है कि मनोहर में ईमानदारी व अन्य मानवीय, नैतिक मूल्य जैसे सहृदयता, वफादारी, विनम्रता, कार्यसंलग्नता, निर्भीकता आदि कूट-कूट कर भरे थे। जब मनोहर की पत्नी ‘श्यामा’ जीवित थी तब उसके और मनोहर के बीच धन को कमी को लेकर कई बार वाद-विवाद होते रहते थे। जब ज्यादा बहस और श्यामा के कटाक्ष बढ़ने लगे तो मनोहर ने कहा दिया - “तो छोड़ दो मुझे। दे दो डायवोर्स! हो जाओ मुक्त। सुधार लो अपनी भूल।”<sup>9</sup> इन सबके बावजूद मनोहर ने अपनी ईमानदारी का दामन नहीं छोड़ा।

#### ● विपरीत परिस्थितियों में धैर्य -

‘उत्कोच’ में दलित विमर्श के भी स्वर है। मनोहर के सहकर्मियों द्वारा मनोहर को रिश्तत लेने हेतु समझाने के लिए उकसाया जाता है कि सभी रिश्तत लेते हैं, हम अगर नहीं लेंगे तो क्या अंतर पड़ेगा ? छोटे-छोटे अवसर यदि भुना लिये जायें तो क्या बुराई है ? उपन्यास के कथानक के मध्य में कर्दम जी ने बतलाया है कि मनोहर के मन में भी रिश्तत लेने के लिये डाँवाडोल स्थिति निर्मित हो गई थी, मगर जीत मनोहर की ईमानदारी के मूल्य की होती है वह अपने आदर्शों पर ही डटा रहता है।

उपन्यास के अंत में घटनाक्रमों में वर्णित है कि “मनोहर का मित्र ‘सुंदरलाल’ जो कि रिश्तत लेने हेतु सदैव अनेक तर्क प्रस्तुत कर मनोहर को उकसाता रहता था, एक दिन ऑफिस में चुपचाप हो जाता है और मनोहर के कुरेदने पर कहता है - “तुम ठीक कहते हो मनोहर। समाज में मेहनत और ईमानदारी की कमाई से ही मान-सम्मान मिलता है। मनोहर आश्चर्यचकित होकर सच जानने के लिय पूछता है तो पता चलता है कि सुंदरलाल के बेटे ‘प्रतीक’ को उसके स्कूल में सुंदरलाल की ऊपरी कमाई के लिये व्यंग्य किया जाता है। स्कूल में बेटे ‘प्रतीक’ को दो नम्बरी की औलाद या दो नम्बरी कह कर चिढ़ाया जाता है। तब सुंदरलाल की पत्नी कहती है कि कुछ भी करो, कैसे भी करो, लेकिन घर में दो नंबर का पैसा नहीं आना चाहिये। मुझे पैसा नहीं मेरा बेटा ठीक चाहिये।”<sup>10</sup> यही उद्धरण इस उपन्यास में ईमानदार, भ्रष्टाचार विरोधी, कार्यनिष्ठ, कर्तव्यपरायण, मनोहर के आदर्शवादी व्यक्तित्व की जीत को सुनिश्चित करता है। वह श्यामा की मृत्यु के पश्चात अपनी बेटी ‘सुजाता’ को अच्छी परवरिश देता है। उपन्यास के अंत में वह श्यामा की तस्वीर के आगे कहता है कि वो गलत नहीं था।

● निष्कर्ष -

शोध पत्र में प्रस्तुत 'उत्कोच' उपन्यास के शीर्षक का अर्थ है - रिश्तत, घूस या भ्रष्टाचार। इस शीर्षक पर नायक 'मनोहर' की ईमानदारी का मूल्य जीत जाता है। उसका आदर्शवादी व्यक्तित्व किसी भी स्थिति में डांवाडोल नहीं होता है। इस उपन्यास में विस्तार से एक आदर्शवादी युवक 'मनोहर' के मानसिक व सामाजिक संघर्ष को चित्रित किया गया है। यह उपन्यास मूलतः भ्रष्टाचार पर केन्द्रित है, मगर कर्दम जी ने नायक 'मनोहर' के माध्यम से आदर्शवादी विचारधारा को स्थापित किया है। उपन्यास के नायक 'मनोहर' किसी भी रूप में रिश्तत का समर्थन न कर सदैव अपनी ईमानदारी पर कायम रहता है। वह सहकर्मियों, अधिकारियों, पत्नी द्वारा उपेक्षित होकर, उनके कटाक्ष, व्यंग्य झेलकर, उनके उपहास सहकर, उत्पीड़न का षिकार होकर भी अपने आदर्शवादी व्यक्तित्व को खंडित नहीं होने देता।

अतः निष्कर्षात्मक तौर पर स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि श्री जयप्रकाश कर्दम के उपन्यास 'उत्कोच' का नायक 'मनोहर' का व्यक्तित्व आदर्शवादी विचारधारा पर आधारित है, वह भ्रष्टाचार विरोधी है, रिश्तत वह किसी भी रूप व किसी भी अनुकूल, प्रतिकूल परिस्थिति में नहीं लेता है, कर्तव्यनिष्ठा, विनम्रता, कार्यपरायणता, ईमानदारी आदि नैतिक मूल्यों से वह सरोबार है, सहज व स्वाभाविक रूप से अपने कर्तव्यों का निर्वाह करता है। ऐसे ही धीर-वीर मूल्यवान आदर्शवाद युवक समाज व देश को भ्रष्टाचारविहीन बना सकते हैं, यही इस 'उत्कोच' उपन्यास का प्रतिपाद्य भी है।

संदर्भ ग्रंथ :-

- 1) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), भूमिका से उद्धरित, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019
- 2) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), भूमिका से उद्धरित, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019
- 3) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), भूमिका से उद्धरित, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019
- 4) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-80
- 5) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-47
- 6) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-18-19

- 7) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-43-44
- 8) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-50
- 9) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-104-105
- 10) कर्दम, जयप्रकाश, 'उत्कोच' (उपन्यास), राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2019, पृ.सं.-149-150